शिखर की ओर बढ़ती साहित्यिक सांस्कृतिक परिषद्

किसी भी क्षेत्र के विकास के लिए वहाँ के सांस्कृतिक एवं भाषायी विकास को भी सम्मिलित किया जाता है। भारत में सांस्कृतिक परम्पराओं का विशिष्ट स्वरुप अलग–अलग क्षेत्रों की बोलियों, भाषाओं तथा वहाँ की ललित कलाओं में दिखाई देता है। मेरठ देश की राजधानी से जुड़ा हुआ क्षेत्र है। अतः यहाँ की सांस्कृतिक गतिविधियाँ तथा अभिरुचियाँ जहाँ एक ओर क्षेत्रीय महत्व को अलग रुप से दर्ज करती हैं वहीं राष्ट्रीय तथा अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर हो रहे चिन्तन–मनन तथा सांस्कृतिक प्रभावों को तेजी से ग्रहण करती है।

सांस्कृति तथा परम्पराओं के इस स्वरुप की उच्चतर शिक्षा संस्थानों, शोध सस्थानों, महाविद्यालयों तथा विश्वविद्यालयों में अभिव्यक्ति के लिए समय की माँग भी है और युवाओं को उनकी विरासत से जोड़ने का प्रयास भी। इस क्रम में छात्राओं की सांस्कृतिक अभिरुचियों के उन्नयन एवं विकास के लिए 9 सितम्बर, 2003 को साहित्यिक सांस्कृतिक परिषद् का गठन किया गया।

इस परिषद् का गठन तत्कालीन कुलपति डॉ० रामपाल सिह के संरक्षण में हुआ जिसमें डॉ0 हरिओम पवाँर (अध्यक्ष), डॉ0 सुभाष वसिष्ठ (उपाध्यक्ष), डॉ0 नवीन चन्द्र लोहनी (संयोजक), डॉ0 असलम जमशेदपुरी, डॉ0 मंजू गोयल, डॉ0 प्रज्ञा पाठक, डॉ0 रेखा सारस्वत, डॉ0 सुनंदा मुकेश, डॉ० जया शर्मा, डॉ0 अजय विजय कौर, डॉ0 संजीव कुमार शर्मा, डॉ0 कुमार विश्वास, डॉ0 एम0 ए0 लारी आजाद (सदस्य) डॉ0 सी0 के सिंह (वित्त नियंत्रक), डॉ0 राजकुमार (कुल सचिव) तथा प्रो0 जे0 के0 पुण्डीर (अधिष्ठाता, छात्र कल्याण) चुने गए।

परिषद् के गठन के उपरान्त साहित्यिक सांस्कृतिक कार्यक्रम सुनियोजित ढंग से होने लगे। इस परिषद् के तत्वावधान में पहली बार दिसम्बर 2003 में कार्यक्रम आयोजित हुए, जिसके अन्तर्गत पाँच दिवसीय साहित्यिक सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन किया गया। पहले 21 दिसम्बर 2003 को चित्रकला प्रतियोगिता सम्पन्न कराई गई तथा शाम को गीत–गजल संध्या का आयोजन किया गया, जिसमें मुख्य अतिथि श्री बची सिंह रावत (केन्द्रीय विज्ञान एवं तकनीक राज्यमंत्री) थे। इस अवसर पर चित्रकला प्रतियोगिता के विजयी प्रतिभागियों को पुरस्कार भी वितरित किए गए। 22 दिसम्बर, 2003 को 'मीडिया के सामाजिक सरोकार' विषय पर एक संगोष्ठी सम्पन्न कराई गई। जिसके प्रमुख वक्ता श्री सुधीश पचौरी (मीडिया विशेषज्ञ), श्री शशि शेखर (संपादक अमर उजाला) तथा श्री प्रभात डबराल (उपाध्यक्ष, सहारा समय टी0 वी0) थे। इसी दिन वाद–विवाद प्रतियोगिता भी आयोजित की गई तथा शाम को रंगारंग लोक संगीत कार्यक्रम छात्र–छात्राओं द्वारा आयोजित किया गया। इसी क्रम में तीसरे दिन, 23 दिसम्बर, 2003 को 'चौधरी चरण सिंह व्यक्तित्व एवं विचार' विषय पर संगोष्ठी आयोजित की गई जिसमें मुख्य अतिथि श्री विक्रम वर्मा (मंत्री, खेल एवं युवा मामले, भारत सरकार) रहे। इसी दिन आशु निबन्ध लेखन प्रतियोगिता, आशु कहानी लेखन प्रतियोगिता भी सम्पन्न कराई गई। शाम को अखिल भारतीय कवि सम्मेलन का आयोजन कराया गया। इसमें जाने माने कवि–हरिओम पँवार, नवाज देवबन्दी, कुँवर बेचैन, अरुण जैमिनी, सुनील जोगी, नवाज देवबन्दी, कृष्ण मित्र, आदि ने कविता पाठ किया। इस अवसर पर मुख्य अतिथि प्रो0 किरणपाल सिंह (बेसिक शिक्षा मंत्री, उत्तर प्रदेश सरकार) अध्यक्ष, डॉ० रामपाल सिंह (कुलपति) तथा संयोजक डॉ0 नवीन चन्द्र लोहनी रहे। 24 दिसम्बर 2003 को स्वरचित कविता प्रतियागिता का आयोजन कराया गया तथा शाम को मुशायरा आयोजित किया गया। इस अवसर पर देश के जाने–माने शायरों ने भाग लिया। 25 दिसम्बर 2003 को एकल अभिनय प्रतियोगिता तथा नाटक प्रतियोगिता आयोजित की गई। जिसमें छात्र–छात्राओं ने अपने अभिनय का परिचय दिया। परिषद् का यह पहला कार्यक्रम सफल रहा तथा इसकी सराहना हुई।

26 जनवरी 2004 को गणतन्त्र दिवस के अवसर पर देशभक्ति गीत, गजल का आयोजन किया गया तथा शाम को संगीत संध्या का आयोजन किया गया, इसमें प्रसिद्ध सितार वादक शिवनाथ ने सितार वादन कर दर्शकों को भावमुग्ध कर दिया। दिसम्बर, 2004 में भी साहित्यिक सांस्कृतिक परिषद् के तत्वावधान में कवि सम्मेलन, कहानी प्रतियोगिता, संगीत प्रतियोगिता, वाद–विवाद प्रतियोगिता, चित्रकला प्रतियोगिता सहित अन्य प्रतियोगिताएं भी आयोजित कराई गई। वर्ष 2004 में डॉ० संजीव कुमार शर्मा को साहित्यिक सांस्कृतिक परिषद् का संयोजक बनाया गया। परिषद् की ओर से व्याख्यान भी सम्पन्न हुए तथा प्रदेश स्तरीय प्रतियोगिता में गोरखपुर विश्वविद्यालय में प्रो० वाई विमला तथा डॉ० निधि शर्मा के नेतृत्व में टीम भेजी गई, जिसने कई प्रतियोगिताओं में श्रेष्ठ प्रदर्शन किया तथा वाद/विवाद/मिमिक्री प्रतियोगिता में पदक प्राप्त किए। कविता, नृत्य गायन की प्रतिभागिता सराही गई।

परिषद् की ओर से दिसम्बर 2005 में छात्र–छात्राओं के रंगारंग कार्यक्रम संपन्न हुए। डॉ0 असलम जमशेदपुरी तथा अन्य सदस्यों ने इसमें सहयोग किया। डॉ0 नवीन चन्द्र लोहनी को पुनः संयोजक बनाया गया। 23 दिसम्बर, 2005 को साहित्यिक सांस्कृतिक परिषद् द्वारा विराट कवि सम्मेलन एवं मुशायरा आयोजित किया गया। इस अवसर पर मुख्य अतिथि मण्डलायुक्त मोहिन्दर सिंह (आई0 ए0 एस0) अध्यक्ष, प्रो0 एस0 पी0 ओझा (कुलपति), संयोजक डॉ0 नवीन चन्द्र लोहनी रहे। इस कवि सम्मेलन एवं मुशायरे में देश के जाने–माने कवि एवं शायर नवाज देवबंदी, गजेन्द्र सोलंकी, प्रवीण शुक्ल, विनीत चौहान, हरिओम पंवार, अलताफ जिया, अबुल गौरी, सरदार प्रताप फौजदार, सुभाष वसिष्ठ, सम्पत सरल आदि ने अपनी कविताओं के माध्यम से श्रेताओं को मंत्रमुग्ध किया।

15 फरवरी, 2006 से चौधरी चरण सिंह विश्वविद्यालय एवं उससे सम्बद्ध महाविद्यालयों में युवा महोत्सव के लिए 23 जनवरी 2007 को

नेताजी सुभाष चंद्र बोस की जन्मतिथि पर परिषद् की ओर से आयोजित कवि सम्मेलन में बालकवि वैरागी आदि कवियों ने काव्यपाठ किया। इस कवि सम्मेलन का संचालन डॉ0 कुमार विश्वास ने किया। थियेटर सम्बन्धी प्रतियोगिताएँ एम0 एल0 गर्ल्स (पी०जी०) कॉलिज, सहारनपुर में, 7–8 फरवरी को ललित कला प्रतियोगिताएँ आर0 जी0 (पी0 जी0) कॉलिज, मेरठ में, 9 फरवरी को क्विज प्रतियोगिता चौ0 चरण सिंह विश्वविद्यालय परिसर में, 10–11 फरवरी को आशु भाषण तथा वाद–विवाद प्रतियोगिताएँ मुल्तानीमल कॉलिज मोदीनगर में, 12–13 को नृत्य प्रतियोगिताएँ डी0 ए0 वी0 कॉलेज, मुजफ्फरनगर में सम्पन्न कराई गई। इन प्रतियोगिताओं में प्रथम स्थान प्राप्त प्रतिभागियों को 20 से 24 फरवरी 2006 तक के लिए वीर बहादुर सिंह विश्वविद्यालय जौनपुर 'युवा महोत्सव' समारोह में भेजा गया। यहाँ पर भाषण प्रतियोगिता, कोलाज प्रतियोगिता, वाद–विवाद प्रतियोगिता, स्पॉट पेंटिंग, कार्टून प्रतियोगिता में चौ0 चरण सिंह विश्वविद्यालय मेरठ के प्रतिभागियों ने बहुत अच्छा प्रदर्शन किया। टीम संयोजक डॉ० प्रदीप यादव सिंह, मेरठ कॉलिज, ने टीम का नेतृत्व किया।

20 दिसम्बर 2006 से 23 दिसम्बर 2006 तक साहित्यिक सांस्कृतिक परिषद् चौ0 चरण सिंह विश्वविद्यालय में साहित्यिक–सांस्कृतिक कार्यक्रम सम्पन्न हुए, जिसके अन्तर्गत पूर्व प्रधानमंत्री स्व० चौ0 चरण सिंह के जन्मदिवस पर कला उत्सव, कवि सम्मेलन, रंगारंग कार्यक्रम आयोजित कराए गए। इस अवसर पर मुख्य अतिथि पद्मश्री रामासुतार (वरिष्ठ मूर्तिकार), विशिष्ट अतिथि श्री जितेन हजारिका (वरिष्ठ चित्रकार), अध्यक्ष प्रो0 एस0 पी0 ओझा (कुलपति), संयोजक डॉ0 नवीन चन्द्र लोहनी एवं डॉ0 लाल रत्नाकर रहे। इस अवसर पर चौ0 चरण सिंह विश्वविद्यालय से सम्बद्ध विभिन्न महाविद्यालयों के प्राध्यापकों में लाल रत्नाकार, डॉ0 अमृत लाल, डॉ0 राका अग्रवाल, डॉ0 निशा शर्मा, डॉ0 मधु जैन, डॉ0 दीप शिखा, डॉ0 अर्चना रानी, डॉ0 अलका चड्ढा, डॉ0 गीता रानी, डॉ0 अखिलेश शर्मा तथा डॉ0 हेमन्त राय ने चार दिन तक नेताजी सुभाष चंद्र बोस प्रेक्षागृह में चित्र (आनस्पाट) बनाए तथा इस आयोजन में आए छात्र–छात्राओं को इस कला से अवगत कराया। इस अवसर पर संगीत संध्या में जहाँ पं0 शिवनाथ मिश्र (बनारस) ने सितार वादन कर लोगों को मन्त्र–मुग्ध किया वहीं महाविद्यालयों की संगीत शिक्षिकाओं ने गायन, वाद्य में कार्यक्रम प्रस्तुत किए। जिनमें डॉ0 रागिनी प्रताप, डॉ0 जया शर्मा, डॉ0 रेखा सेठ, डॉ0 पूनम मित्तल सहित कई महाविद्यालयों की शिक्षिकाओं की संगीतमय प्रस्तुतियाँ सराही गई। इसके साथ ही छात्र–छात्राओं की रंगारंग प्रस्तुतियाँ एवं 23 दिसम्बर को संगोष्ठी एवं कवि सम्मेलन भी सम्पन्न हुए। कवि सम्मेलन में हरिओम पंवार, सुरेन्द्र शर्मा, प्रवीण शुक्ल, विनीत चौहान, सांढ बनारसी, डॉ0 श्री कृष्ण तिवारी, डॉ0 सुभाष वसिष्ठ तथा सुमनेश 'सुमन' आदि कवियों ने भाग लिया। संगोष्ठी में पूर्व मंत्री चौ0 नरेन्द्र सिंह एवं ओम प्रकाश तिवारी (एम0एल0सी0) ने अपने विचार व्यक्त किए। माननीय कुलपति के नेतृत्व में सन् 2007 में साहित्यिक सांस्कृतिक परिषद् का पुनर्गठन किया गया तथा डॉ0 नन्द कुमार को अध्यक्ष, डॉ0 रागिनी प्रताप को उपाध्यक्ष तथा डॉ0 नवीन चन्द्र लोहनी को संयोजक बनाया गया। परिषद् की समिति में प्रो0 वाई0 विमला, डॉ0 रेखा सेठ, डॉ0 लाल रत्नाकर, डॉ0 आर0 एम0 तिवारी, डॉ0 आर0 के0 सोनी, डॉ0 ए0के0 चौबे, डॉ0 अतवीर सिंह, श्री संजय कुमार, डॉ0 आलोक कुमार, डॉ0 जे0 पी0 यादव को सदस्य के रूप में नामित किया गया। साहित्यिक सांस्कृतिक परिषद् के नेतृत्व में 16 अप्रैल से 19 अप्रैल 2007 तक चौ0 चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ की टीम ने उ0 प्र0 अन्तरविश्वविद्यालय युवा महोत्सव 2007 में सम्पूर्णानंद विश्वविद्यालय वाराणसी में भाग लिया। टीम डॉ0 ए0 के0 चौबे तथा डॉ0 शुक्ला के संयोजन में गई, जहां छात्र–छात्राओं का प्रदर्शन सराहनीय रहा।

इस समारोह में पोस्टर मेकिंग प्रतियोगिता में मीनाक्षी नागर ने प्रथम पुरस्कार, मूर्तिकला प्रतियोगिता में बबीत कुमार ने द्वितीय पुरस्कार प्राप्त किया। हिंदी वाद–विवाद प्रतियोगिता में भी चौ0 चरण सिंह विश्वविद्यालय ने प्रथम स्थान प्राप्त किया। इसके अतिरिक्त मूक अभिनय, रंगोली, व्यंग्य, चित्र प्रतियोगिता, लोकनृत्य प्रतियोगिता में बहुत अच्छा प्रदर्शन किया। इस टीम के संयोजन में 22 दिसम्बर 2007 को साहित्यिक सांस्कृतिक परिषद् के तत्वावधान में चौ0 चरण सिंह के जन्मदिवस के अवसर पर रंगारंग कार्यक्रम सम्पन्न कराए गए, जिसके अध्यक्ष प्रो0 एस0 पी0 ओझा (कुलपति) तथा (संयोजक) डॉ0 नवीन चन्द्र लोहनी रहे। इस अवसर पर छात्र–छात्राओं की प्रस्तुतियां सराहनीय रहीं और कई प्रतिभाएँ निखर कर सामने आई। 23 दिसम्बर 2007 को विराट कवि सम्मेलन तथा मुशायरा का आयोजन कराया गया, जिसकी अध्यक्षता प्रो0 एस0 पी0 ओझा (कुलपति) तथा संचालन प्रो0 अशोक चक्रधर ने किया। इस अवसर पर देश के जाने–माने कवियों और शायरों ने कविताओं एवं ग़ज़ल से श्रोताओं को मंत्रमुग्ध कर दिया। सन् 2008 में परिषद् की समिति में प्रो0 प्रतिभा त्यागी तथा डॉ0 जी0 एस0 रूहल को भी सम्मिलित किया गया। डॉ0 एच0 एस0 बालियान, प्रो0 एम0 के0 गुप्ता, श्री प्रभात रंजन तथा श्री एच0 एन0 शुक्ला को पदेन सदस्य बनाया गया। 10 मई, 2008 को क्रांति दिवस के अवसर पर साहित्यिक सांस्कृतिक परिषद् के नेतृत्व में संगोष्ठी एवं नुक्कड़ नाटक का आयोजन कराया गया, जो स्वतंन्त्रता संग्राम पर केन्द्रित था। इस अवसर पर वरिष्ठ पत्रकार प्रभास जोशी, डॉ0 प्रेम सिंह, श्री अरुण त्रिपाठी, शम्सुल इस्लाम की उपस्थिति महत्वपूर्ण रही। नुक्कड़ नाटक के संयोजक श्री ब्रह्म प्रकाश एवं डॉ0 शम्सुल इस्लाम रहे। 24 सितम्बर 2008 को साहित्यिक सांस्कृतिक परिषद् के तत्वावधान में 'स्पिक मैके' के सहयोग से शास्त्रीय नृत्य का आयोजन कराया गया, जिसमें विख्यात कथक नृत्यांगना सुश्री शर्वरी जैमिनिस ने अपने नृत्य से दर्शकों को भाव विभोर कर दिया।

चौ0 चरण सिंह के जन्मदिवस के अवसर पर 21 दिसम्बर से 23 दिसम्बर 2008 तक साहित्यिक सांस्कृतिक परिषद् ने विभिन्न सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन कराया। 21 दिसम्बर 2008 को चित्रकला प्रदर्शनी आयोजित की गई। प्रदर्शनी का उद्घाटन प्रो0 एस0 के0 काक एवं श्रीमती नीरजा काक द्वारा किया गया। इसी क्रम में 'स्पिक मैके' के सहयोग से सितारवादन, ओडिसी नृत्य और कव्वाली का आयोजन किया गया। सितारवादन प्रसिद्ध सितारवादक प्रतीक चौधरी द्वारा प्रस्तुत किया गया। ओडिसी नृत्य प्रख्यात नृत्यांगना सुश्री गीता महालिक ने प्रस्तुत किया। कव्वाली का प्रस्तुतीकरण प्रसिद्ध उस्ताद क़ादिर नियाजी का रहा। इन प्रस्तुतियों ने दर्शकों को भाव विभोर कर दिया। इस अवसर पर कार्यक्रम अध्यक्ष प्रो0 एस0 के0 काक (कुलपति), अध्यक्ष डॉ0 नंद कुमार, संयोजक प्रो0 नवीन चन्द्र लोहनी, प्रो0 वेदप्रकाश 'बटुक' तथा डॉ0 राधामोहन तिवारी का सान्निध्य रहा।

22 दिसम्बर 2008 को साहित्यिक सांस्कृतिक परिषद् ने रंगारंग कार्यक्रम का आयोजन कराया। जिसके अन्तर्गत सांस्कृतिक प्रतियोगिताओं में प्रथम तथा द्वितीय स्थान पर रही महाविद्यालयों की टीमों तथा विश्वविद्यालय परिसर के छात्र–छात्राओं ने नृत्य, गायन, नाटक, मिमिक्री, सामूहिक नृत्य, रागनी जैसे विभिन्न सांस्कृतिक कार्यक्रमों में बढ़–चढ़ कर हिस्सा लिया। इस अवसर पर अध्यक्ष प्रो0 एस0 के0 काक (माननीय कुलपति) का सान्निध्य प्राप्त हुआ। कार्यक्रम का संचालन डॉ0 रागिनी प्रताप ने किया। इस अवसर विश्वविद्यालय की साहित्यिक सांस्कृतिक परिषद् के पदाधिकारीगण उपस्थित रहे। इस अवसर पर फिल्म अभिनेता राज बब्बर भी आए जिन्होंने युवाओं को संबोधित किया। चौधरी चरण सिंह के जन्मदिवस पर प्रत्येक वर्ष की भांति इस वर्ष 23 दिसम्बर 2008 को विश्वविद्यालय परिसर में हवन कराया गया तथा ''चौधरी चरण सिंह के विचार एवं चिंतन'' विषय पर संगोष्ठी का आयोजन भी किया गया। इस अवसर पर अध्यक्ष प्रो0 एस0 के0 काक (माननीय कुलपति) मुख्य अतिथि पूर्व केन्दीय मंत्री सतपाल मलिक, पूर्व कुलपति प्रो0 आर0 बी0 एल0 गोस्वामी, डॉ0 कृपाल सिंह, वेद प्रकाश 'बटुक', संयोजक प्रो0 नवीन चन्द्र लोहनी उपस्थित रहे। 23 दिसम्बर को ही विराट कवि सम्मेलन एवं मुशायरे का आयोजन साहित्यिक सांस्कृतिक परिषद् के तत्वावधान में किया गया। इस कवि सम्मेलन में देश के जाने माने कवि डॉ0 कुवँर बेचैन, डॉ0 नवाज देवबंदी, अरूण जैमिनी, हरिओम पंवार, सुनील जोगी, अर्जुन सिशौदिया, प्रवीण शुक्ल, शायरा मुमताज नसीम, राकेश बी0 दुबे, कवयित्री जय वर्मा, तुषा शर्मा आदि ने अपनी कविताओं से दर्शकों का मन मोह लिया। संचालन अरूण जैमिनी ने किया। कार्यक्रम में अध्यक्ष प्रो0 एस0 के0 काक (माननीय कुलपति), संयोजक प्रो0 नवीन चन्द्र लोहनी तथा अन्य पदाधिकारीगण उपस्थित रहे।

साहित्यिक सांस्कृतिक परिषद् के तत्वावधान में विभिन्न सांस्कृतिक प्रतियोगिताएं चौधरी चरण सिंह विश्वविद्यालय से सम्बद्ध महाविद्यालयों में भी समय–समय पर सम्पन्न कराई जाती रही हैं। वर्ष 2006 के अन्तर्गत 30 नवम्बर 2006 से 06 दिसम्बर 2006 तक संगीत प्रतियोगिताएं डी0 ए0 वी0 कॉलेज, मुजफ्फरनगर, नृत्य प्रतियोगिताएं इस्माइल गर्ल्स कॉलेज, मेरठ, क्विज प्रतियोगिताएं चौधरी चरण सिंह विश्वविद्यालय परिसर, मेरठ, आशु–भाषण एवं वाद–विवाद प्रतियोगिताएं गिन्नी देवी गर्ल्स कॉलेज, मोदीनगर, कविता प्रतियोगिताएं मेरठ कॉलिज, मेरठ, थियेटर प्रतियोगिताएं एन0 आर0 ई0 सी0 कॉलेज, खुर्जा, ललित कला प्रतियोगिताएं चौधरी चरण सिंह विश्वविद्यालय परिसर, मेरठ में संपन्न कराई गई। इसी क्रम में वर्ष 2008 में सांस्कृतिक प्रतियोगिताएं विभिन्न महाविद्यालयों में 01 दिसम्बर 2008 से 08 दिसम्बर 2008 के बीच सम्पन्न कराई गई। इसके अन्तर्गत क्विज एवं कविता प्रतियोगिताएं गिन्नी देवी कॉलेज, मोदीनगर, आशु–भाषण एवं वाद–विवाद प्रतियोगिताएं डी0 एन0 कॉलेज, गुलावठी, ललित कला प्रतियोगिताएं डी0 ए0 वी0 कॉलेज, मुजफ्फरनगर, थियेटर प्रतियोगिताएं वी0 एम0 एल0 जी0 कॉलेज, गाजियाबाद, संगीत प्रतियोगिताएं कनोहर लाल महिला महाविद्यालय, मेरठ तथा नृत्य प्रतियोगिताएं चौधरी चरण सिंह विश्वविद्यालय परिसर, मेरठ में सम्पन्न कराई गई। इन प्रतियोगिताओं में विश्वविद्यालय तथा महाविद्यालयों के छात्र–छात्राओं की छिपी प्रतिभा उजागर हुई और उनको प्रान्तीय तथा राष्ट्रीय स्तर पर जाने का अवसर प्राप्त हुआ। इन प्रतियोगिताओं के अतिरिक्त भी गत वर्षो में डी0 ए0 वी0 कॉलेज, मुजफ्फरनगर, मुन्नालाल कॉलेज, सहारनपुर, गिन्नी देवी कॉलेज, मोदीनगर, महाराज सिंह कॉलेज, सहारनपुर, कनोहर लाल महिला महाविद्यालय, मेरठ, आर0 जी0 कॉलेज, मेरठ, इस्माईल कॉलेज, मेरठ, मेरठ कॉलेज, मेरठ, एन0 आर0 ई0 सी0 कॉलेज, खुर्जा, दिगम्बर जैन कॉलेज, बड़ौत, वी0 एम0 एल0 जी0 कॉलेज, गाजियाबाद, डी0 एन0 कॉलेज, गुलावठी, मुल्तानीमल मोदी कॉलेज, मोदीनगर आदि महाविद्यालयों ने साहित्यिक सांस्कृतिक परिषद् के तत्वावधान में विश्वविद्यालय स्तरीय विभिन्न साहित्यिक सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन कराया जिससे युवाओं को अपनी प्रतिभा दिखाने का अवसर प्राप्त हुआ और कई ऐसी प्रतिभाएं भी सामने आईं जिन्होंने प्रान्तीय, राष्ट्रीय स्तर पर अपनी पहचान स्थापित की।

कवि सम्मेलनों में स्थानीय रचनाकारों को भी समय–समय पर आमन्त्रित किया जाता है। वरिष्ठ गीतकार भारत भूषण, रामप्रकाश राकेश, सत्यपाल सत्यम्, सुमनेश सुमन, पॉपुलर मेरठी, ओकांर गुलशन, तुषा शर्मा ने भी इन सम्मेलनों में काव्य पाठ प्रस्तुत किया। विश्वविद्यालय स्तर पर साहित्यिक संस्कृतिक परिषद् का गठन 2003 में हुआ। प्रारंभिक रुप में इसका उद्देश्य था कि छात्र–छात्राओं को एक मंच मिले तथा वे अखिल भारतीय स्तर पर पहुँचकर अपनी उपस्थिति दर्ज कर सकें। परिषद् अपने लक्ष्य में एक हद तक सफल भी रही। अन्तरमहाविद्यालयी, अन्तरविश्वविद्यालयी, प्रदेश स्तरीय, राष्ट्रीय तथा उत्तरीक्षेत्र विश्वविद्यालय की कई प्रतियोगिताओं में हमारे छात्र–छात्राओं ने भागीदारी की और परिषद् को सफलता इस रुप में मिली कि विश्वविद्यालय के अधिकांश महाविद्यालयों में साहित्यिक सांस्कृतिक गतिविधियों को संचालित करने का एक मंच गठित हुआ तथा विश्वविद्यालय स्तर पर भी परिषद् कार्य करने लगी। महाविद्यालयों की परिषदों द्वारा समय–समय पर व्याख्यान, वाद–विवाद, नाटक, ललित कला तथा नृत्य के आयोजन किए जाते रहते हैं। प्रायः सभी साहित्यिक साांस्कृतिक परिषदें अपने–अपने महाविद्यालयों में अनेक प्रतियोगिताएं करा रही है, परन्तु विश्वविद्यालयों की स्तरीय प्रतियोगिताओं में प्रतिभागिता कम रही है। राष्ट्रीय पर्वो, महापुरुषों की जन्म तिथियों, महत्वपूर्ण सांस्कृतिक पर्वो पर महाविद्यालय तथा विश्वविद्यालय में सांस्कृतिक परिषद् छात्र–छात्राओं के ज्ञानवर्द्धन तथा मनोरंजन के लिए विविध कार्यक्रम आयोजित कराती रहती है। इनमें विविध सांस्कृतिक प्रस्तुतियाँ, क्विज, भाषा, आशुभाषण, वाद–विवाद तथा लेखन की विविध कलाएँ जुड़ी है। यहाँ यह कहना उपयुक्त रहेगा कि विश्वविद्यालय परिसर के समस्त विभागों के छात्र–छात्राओं विशेषतः चित्रकला विभाग, हिन्दी विभाग के छात्र–छात्राओं तथा तत्कालीन छात्र संघों का परिषद् के कार्यक्रम आयोजन में विशेष सहयोग रहा है। परिषद् भविष्य में और भी अधिक सक्रिय सहयोग की आकांक्षा रखती है।

मेरठ की
लोककलाएँ

लोककला सामाजिक सहभागिता और सामाजिक सम्प्रेषण का सशक्त माध्यम है। नृविज्ञान का मानना है कि मन को जीने के लिए रस चाहिए और रस का सृजन कलाएँ अपने कौशल और शिल्प द्वारा करती है। कौशल और शिल्प इसीलिए पैदा होते हैं और विकास करते हैं। इस प्रकार मानवता का निरन्तर विकास होता आया है। समाज विज्ञानी कहते हैं कि लोकरंग, लोकनृत्य, लोकगीत आदि सामाजिक जीवन के केन्द्र हैं जहाँ सामाजिकता के महीन तंतु मन को अंदर से जोड़ते हैं। सामाजिक जीवन में व्यक्तियों का साथ–साथ उठना, बैठना, चलना, बोलना, उमंगों से हिलोरें लेना, एक स्वर में वाह–वाह कहना, समान मन और संकल्पों से परिपूर्ण हो जाना सभी लोककलाओं के माध्यम से ही होता है। डॉ० हरद्वारी लाल शर्मा का मानना है कि 'लोककलाओं' में बहुधा लोक साथ रहता है। अतः सहभोगिता और सहभागिता संभव होते हैं, पारस्परिकता के भाव उमडते हैं और मनुष्य अपनी सामाजिकता का साक्षात भोग करता है। विवाह और दूसरे पर्वो, उत्सवों, सामूहिक जमावों पर लोकगीत अथवा नृत्य में लोक–जीवन का गंभीरतम, सत्यतम भाव–भावनाओं का विकट उन्मीलन होता है, जैसा कि अन्य कलाओं में नहीं। यही कारण है कि भाववेग अथवा भावनाओं के विकट उन्मेष की दृष्टि से लोक कलाएँ सामान्य कलाओं से बहुत आगे है।" इस प्रकार लोककलाएँ लोक–जीवन का दर्पण और लोक चेतना का प्रकट रूप है। ये जीवन को सुन्दरतम बनाने में योगदान करती है। लोककलाओं के मूल स्रोत सभ्यता और संस्कृति में सुरक्षित रहते हैं। इसलिए लोककलाएँ किसी भी देश–प्रदेश–समाज की सांस्कृतिक एकता के रूप में दिखाई देती है। संक्षेप में कहें तो लोककला परम्परा से चली आती कला का ऐसा खास रूप है, जिसको गंवारू कला कहकर उपेक्षित नहीं किया जा सकता। आत्मिक अभिव्यक्ति, उल्लास, उत्साह, सजीवता लोककलाओं की विशेषता होती है।

लोककलाओं के माध्यम आनन्द और सौन्दर्य की अनुभूति होती है जो लोक जीवन की जड़ों को निरंतर रस से आप्लावित करती रहती है। लोककला का सम्बंध सृजन और आनन्द से है। लोककलाओं के अनेक रूप हैं। लोकरंग, लोकगीत, सज्जा–श्रृंगार–अलंकरण, शिल्प और कारीगरी, प्रतीकात्मक एवं पूजा से सम्बंधित कलाएं। ये सभी लोक तत्व की प्रधानता तथा कला तत्व के कारण लोकात्मक हैं, अतः लोककलाएँ हैं।

'लोक वार्ता विज्ञान' (खण्ड 2) पुस्तक में लोककलाओं का वर्गीकरण इस प्रकार किया गया है :–

1. **धार्मिक कलाएँ अथवा प्रतीकात्मक कलाएँ :—** इनमें चित्र, मूर्ति आदि लोककलाएँ सम्मिलित हैं। यंत्र–तंत्र–मंत्र का रहस्य इनका प्राण है।
2. **सज्जा–श्रृंगार–अभिप्राय से सम्बंधित कलाएँ :—** इनका प्रारम्भ जादू–टोना और यंत्र–तंत्र के रहस्यात्मक प्रभावों से हुआ। आज भी स्त्रियां हाथों–पैरों को सम्मोहन–आकर्षण के लिए सजाती है। बिन्दी–रोली–जूड़ा मंगलात्मक माने जाते हैं।
3. **शिल्पकलाएँ :—** मनुष्य की कृति और निर्मितियाँ, रूप जिनका सार–सर्वस्व है।
4. **लोकरंग :—** आविष्ट होकर, मुखौटे ओढ़कर अभिनय एवं नृत्य। इसका विकास अनेक दिशाओं में हुआ, लोकमंच से लेकर नौटंकी, थियेटर तक।
5. **लोकगीत :—** जीवन की गीतिप्रधान अभिव्यक्ति जिसका अविर्भाव लोकरंग से होकर आगे लोकसाहित्य और अभिजात साहित्य के रूपों में हुआ।

मेरठ परिक्षेत्र प्राचीन नाम कुरू जनपद के नाम से जाना जाता है क्योंकि यहाँ महाभारतकालीन कुरूवंश की राजधानी हस्तिनापुर मेरठ मुख्यालय से मात्र 32 कि० मी० की दूरी पर स्थित है। इसी कुरू जनपद के नाम पर इस परिक्षेत्र में बोली जाने वाली बोली 'कौरवी' कहलाती है, जिसका सहारनपुर, मुजफ्फरनगर, बागपत से लेकर गाजियाबाद, बुलन्दशहर तक विस्तृत क्षेत्र है। समूचे मेरठ परक्षित्र पर दृष्टिपात करें तो यहाँ भी विभिन्न लोक कलाएँ और लोककलाकार पैदा हुए जिन्होंने लोक बोली में रचनाएँ कर अभिनयात्मक प्रस्तुति लोक के सम्मुख दिखाई। मेरठ की कितनी ही लोककलाएँ, धार्मिक परिवेश से जुड़ी है। घरों की साज–सज्जा, चौक पूरना, अहोई तथा करवा चौथ आदि का पूजन, व्रत उपवास रखना तथा इन अवसरों पर विशेष आकृतियाँ घर के दरवाजें आदि पर बनाना, वेदिका, मण्डप आदि सजाना, दरवाजों पर बन्दनवार बांधना आदि बहुत–से काम हैं जिसमें धार्मिक रहस्यपूर्ण प्रवृत्तियाँ विद्यमान है और साथ ही कला की रोचकता भी है।

कई लोककलाओं का विकास जादुई प्रभाव से विश्वास के कारण हुआ जिनका वर्तमान रूप कलापूर्ण हो गया है और साथ ही सौन्दर्य को भी बढ़ाता है। मेरठ परिक्षेत्र में स्त्रियों व पुरुषों द्वारा शरीर की साज–सज्जा, प्रसाधन, केश–वेश, बालों का गुंधाना या गुम्फन,

रोली, मेहंदी–आलता आदि विभिन्न पर्वों–उत्सवों के अवसर पर लगाना, ताबीज–कंठी, तिलक, छापा आदि बहुत से कृत्य हैं जिनमें धार्मिक भाव विद्यमान है।

यहाँ पर पर्वों–त्यौहारों के अवसर पर ग्रामीण क्षेत्रों में पशुओं को भी रंगने की प्रथा है जो अत्यंत कलात्मक होती है। बहुत सारे लोकगीत और लोकनृत्य धर्म से जुड़े हैं, जिनमें देवी के गीत, भगतों के नाच या धार्मिक लोकगीत, डमरू की डम–डम, खंजीरा–मंजीरा या ढोलक थाप पर थिरकती लोकधुने यहाँ की लोककलाओं के उदाहरण है। त्यौहारों पर आकृतियाँ बनाकर गीत गाए जाते हैं। 'देव उठावनी एकादशी' पर गाया जाने वाला यह गीत देखें :–

"नई टोकरी नई कपास, देव उठेंगे कातक मास
उठ नारायण, बैठ नारायण, उठूँ सै उठाऊँ सै
छीके धरी चार पूरी, चार पूरी घी चुपड़ी
आप खाऊँ बामन देऊँ, बामन दीजै बूढ़ी गाय
रपट पड़ी बामन के द्वार, नई टोकरी नई कपास
देव उठेंगे कातक मास।"

मेरठ में मनाए जाने वाले पर्व–त्यौहार दशहरा, दीपावली, रक्षा बंधन, अहोई अष्ठमी, करवा चौथ, संकट चौथ, गणगौर, नाग पंचमी, साँझी दुर्गा पूजा आदि के अवसर पर विशेष कला कृतियाँ बनाई जाती हैं जैसे करवा चौथ के अवसर पर दीवार पर करवे की आकृति, अहोई अष्ठमी के अवसर पर 'अहोई माता' की आकृति घरों में बनाई जाती है। इनमें मेहंदी, ऐपन, रोली, आटा हल्दी आदि का प्रयोग किया जाता है। रक्षा बधंन के पर्व पर घर के दरवाजों के दोनों ओर कौले रखे जाते है जिन्हें 'सौन' रखना करते हैं।

दशहरा से आठ दिन पहले दीवार पर गोबर की सहायता से साँझी की देवी प्रतिमा मेरठ की लोककला का उत्कृष्ट नमूना है। क्वारी कन्याएँ इससे सुन्दर वर की कामना करती हैं, व्रत–उपवास आठ दिन तक रखती हैं। नवरात्रों में 'साँझी' की प्रत्येक शाम को पूजा–अर्चना की जाती है, इसकी कुछ पंक्तियाँ देखें :

"आरता री आरता मेरी साँझी माई आरता
काहे का दिवला, काहे की बाती"
सरसों का तेल जले, सारी रात
× × ×
गोरा री गोरा साँझी का भैया गोरा,
गोरों के नैन चमेली की डाली
× × ×
क्या मेरी साँझी ओढ़ेगी,
क्या मेरी साँझी पहरेगी।
शालू ओढेगी मिश्रू पहरेगी।''

प्रारम्भ से ही अब तक विवाह, जो कलात्मक अभिव्यक्ति है इसके केन्द्र में बहुत–सी लोककलाएँ नृत्य, गान, साज–सज्जा, प्रसाधन, वस्त्र, अलंकार आदि विकासित हुए हैं। विवाह लोक–जीवन का महत्त्वपूर्ण कलात्मक घटक है। विवाह के अवसर पर नेग टेहलों के दिनों से रात्रि में 'रतजगा' होता है और मेहंदी महिलाओं, कन्याओं को बाँटी जाती है। महिलाएँ विशेष आकृतियाँ अपने हाथ–पैरों पर मेंहदी से बनाती हैं, उस समय का यह गीत देखें :–

"मेंहदी सुतन धन जांय, अंगुली में काँटा लागा।
ननद भावज मिल तोड़ती रे,
दोनों ने बदली होड़ रे, अगुंली में काँटा लागा।
ननद की भर गई बोचनी,
भावज की भर गई गोद रे, अगुंली में काँटा लागा।

मेरठ परिक्षेत्र के लोक–जीवन में लोककलाओं का नैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, सामाजिक कई रूपों में अत्यंत महत्त्व है। श्रावण माह में प्रत्येक सोमवार को मेरठ के चार शिव मन्दिरों में झांकिया बनाई जाती हैं जो लोककला का श्रेष्ठ नमूना है। इन शिव मन्दिरों के नाम हैं— सर्राफा बाजार मन्दिर, भूतेश्वर (हनुमान मन्दिर बुढ़ाना दरवाजा), धर्मेश्वर महादेव (बुढ़ाना दरवाजा), झारखण्डी महादेव (नगर पालिका कार्यालय के निकट)। इस झांकियों को बनाने में मुल्तानी मिट्टी, फल, सब्जी, बीज आदि का प्रयोग होता है। इस प्रकार मेरठ की बहुत सारी लोककलाएँ धर्म से सीधा साक्षात्कार कराती हैं।

मेरठ के ग्रामीण क्षेत्रों में विभिन्न अवसरों पर लोकगीत गाए जाते हैं, जिनमें टेहले की गीत, 'सावन के गीत', 'धार्मिक गीत',

'खेल के गीत', संस्कारों के गीत, ऋतुगीत (सावन, फाल्गुन, बसंन्त आदि), धार्मिक गीत, व्यवसाय के गीत (कृषि, बुनकर आदि) विशेष स्थान रखते हैं। विभिन्न लोकधुनों का प्रयोग इनमें महिलाएँ करती हैं। लोकगीतों के माध्यम से ही सांस्कृतिक पृष्ठभूमि बनती है। लाड़ों, बन्ना, घोड़ी, फेरे या भाँवर गीत, बान, ईद्द के गीत, विदाई के गीत, हल्दी–मेहंदी–तेल आदि के गीत मेरठ की संस्कृति में रचे बसे हैं। लाडो गीत की कुछ पंक्तियाँ देखें :–

"औले री कौले लाड़ो, गुड़ियाँ है छोड़ी,
छोड़ा सहेलियों का साथ।
जिस दिन लाड़ो तेरा जनम हुआ था,
हुई है बजर की रात
× × ×
अब मत बोले रतनाली कोयलिया
छोड़ा बाबुल का देस।"

इस प्रकार ये गीत लोक जीवन के स्वर और दर्पण दोनों हैं। यहाँ की लोकधुनें उत्कृष्टता की परिचायक है। एक बरसाती लोक धुन देखें :–

"नन्हीं–नन्हीं बुन्दिया,/ बेब्बे मेरी/ पड़ रही, जी/
हे मा मेरी,/ जांगी झूल्लन/ बाग में जी/"

यह गीति है और इसके स्वरवितान में अदभुत गति और यति का विधान है। इनका सरल, सहज व्याकरण है। अनेक कथागीत मेरठ से सम्बद्ध है जैसे बागपत के पास की मुगल काल की हिन्दू महिला की कथा 'चन्द्रावली' नामक महिला से संबंधित है जिसे कई रुपों में परिक्षेत्र के गावों में गाया जाता है। कुछ पंक्तियाँ देंखे :–

"सिरग उड़न्ती चीड़ली अंखियां देसा ले जाओ।
मेरे बाबुल ते यों कहियो री, दे लई तंबुओं के बीच।।
मेरे बिरन ते, मेरे हाकम ते यों कहो, दे लई तबुंओ के बीच।
बाबुल सुन के रो पड़े, कोई बिरन ने खाई है पछाड़।।
हाकम सुन के हंस पड़्या, कोई ऐसी तो ल्याऊ दो–चार।
सजन बेदर्दी बढ़ की छांह में री, सोए पांव पसार।।
× × ×
सुन रे मुगल के छोहरा, गाड़ी भर ले दाम, ऊँट भर ले दाम
छोड़ों बेटी चंदावली जिसके लम्बे–लम्बे केस................
काम लोलुप मुगल फिर भी चन्द्रावली को नहीं छोड़ता–
'जाओ बाबुल, जाओ बीरन घर आपने, राखूं टुपिया की लाज।
खाना ना खाऊं। पानी ना पीऊं पठान का चाहे भूखी–प्यासी मर जाऊं
रहियो सजन घर आपने राखू टुपिया की लाज
सेज ना चढूँ पठान की, ना अपना धरम गवाऊं।
× × ×
जा रे मुगल के छोहरा पानी भर ल्याऊ।
प्यासी मरै चन्द्रावली जिसके लम्बे–लम्बे केस।
पानी के लिए जैसे ही मुगल पीठ मोडता है तुरन्त ही–
दे लई तबुंओं में आग
गोरी जले चन्दरावली, केस जले जैसे बन की रे घास।
लोध जले केला की गाद्द ज्यूं, दांत जले तिल–चावली।।"

उपर्युक्त लोकगीत मेरठ की लोककला का उत्कृष्ट उदाहरण है। इस गीत पर विचार किया जाना चाहिए जो समस्त नारी समाज को प्रेरणा और चेतना प्रदान करते हुए आदर्श और सतीत्व की शिक्षा दे रहा है। आज के परिवेश में। धान गेहूँ की कटाई चल रही हो या गन्ने की बिजाई, बेटे का जन्म हो या कन्या की विदाई का अवसर हो, फाल्गुन का होली उत्सव हो या सावन की रिमझिम बरसात हो, गढ़ गंगा के मेले में जाती बैलगाड़ी–भैंसागाडियों की लम्बी कतार हो, सीकरी के मेले का अवसर हो, देवी–देवताओं की यात्रा–झाकियाँ हो या

मेरठ परिक्षेत्र का सावन का झूला हो– सभी अवसरों पर कोकिल कंठियों के कंठ से लोकगीतों के स्वर कई रूपों में अपने रंग बिखेरते दिखाई देते हैं। ज्यादातर लोकगीत समूह नृत्य के साथ गाए जाते है। परिक्षेत्र में बनाया जाने वाला तीज का त्यौहार इसका उदाहरण है।

मेरठ की अन्य लोककलाओं में रागनी, रसिया, आल्हा, मल्हार आदि का विकास आज हो रहा है। जगह–जगह रागनी की प्रतियोंगिताएं आयोजित की जाती है और साथ ही साथ भावपूर्ण अभिनय भी मंच पर किया जाता है। इनमें पुरुष अभिनयकारों के साथ–साथ महिला अभिनयकारों की संख्या में भी वृद्धि हुई है। आज यह लोककला थियेटरों तक पहुंची है और बाजार में इसके वीडियों कैसेट भी उपलब्ध हैं।

मेरठ की लोककलाओं में 'यात्रा' का प्रमुख स्थान रहा है। विभिन्न देवी–देवताओं की पूजा करने वाले लोग नृत्य–संगीत तथा अभिनय के साथ अपने आराध्य की यात्रा निकालते हैं। मेरठ में सबसे पहले यात्रा सदर बाजार में 'शक्ति यात्रा' के नाम से निकाली गई। तदनन्तर मेरठ के ही पं० बालकृष्ण ने 'जगन्नाथ यात्रा' निकाली। विभिन्न धार्मिक झाकियों के साथ ये यात्राएं लम्बे समय तक निकलती रही धीरे–धीरे इनमें बदलाव आए और 'यात्रा नाटक' प्रारम्भ हुए। इन 'यात्रा नाटकों' का मंचन हापुड से प्रारम्भ किया गया। कई अखाड़े यहाँ पर 'यात्रा नाटकरे' के रहे। मेरठ में कबाड़ी बाजार का अखाड़ा, 'खारी कुएं का अखाड़ा,' 'पक्के बाग' और 'खिड़की बाजार का अखाड़ा' यात्रा नाटकों के लिए ख्यात रहे। वर्तमान में भी समय–समय पर 'शक्ति यात्राएं', 'राम यात्रा', 'कृष्ण यात्रा' तथा वर्तमान में साईं यात्रा' यहाँ पर निकाली जाती है जिनमें विभिन्न रंग–बिरंगे वस्त्रों से सजे नर–नारियाँ नृत्य करते हुए चलते हैं।

मेरठ ने रंगमंच में भी नाम कमाया। यहाँ की विशिष्ट लोकनाट्य परंपरा रही है। यहाँ पर लोकनाट्य में 'स्वांग' बहुत प्रसिद्ध हुआ। 'सदासुख राम' और 'अम्बाराम' दो प्रसिद्ध स्वांगकारों ने मेरठ परिक्षेत्र में 'स्वांगों' की शुरूआत की। स्वांगो की शैलियां यहाँ भगत शैली तथा सनातनी शैली के नाम से विख्यात हुई जिसमें प्रत्येक स्वांगकार सबसे पहले 'देवी' की अथवा शंकर की भेट गाता है। देवी–देवताओं के पूजन से स्वांग का आरम्भ होता है। 'बैठी ताल' और 'खड़ी ताल' के स्वांग अखाड़े मेरठ मे रहे। 'अखाड़ा बनिया पाड़ा', 'अखाड़ा ठठेर वाड़ा', 'अखाड़ा पत्थर वाला' 'अखाड़ा भाटवाड़ा', 'अखाड़ा बागपत' यहाँ के बैठीताल के विख्यात अखाड़े रहे। खड़ीताल के स्वांग अखाड़ों में सन् 1857 से 1957 ई० तक 'प० मक्खनलाल का अखाड़ा', 'पं० दीपचन्द का अखाड़ा', 'शंकरदास का अखाड़ा', 'सेढू सिंह का अखाड़ा' ने विशेष ख्याति अर्जित की। आगे चलकर 'पं० बलवन्त सिंह उर्फ बुल्ली', 'सगुवा सिंह', 'बुन्दूमीर', 'रघुवीर, 'दीना' चन्द्रलाल 'बादी', नत्थूदास, मानसिंह, गोपाल सहाय, दीपचन्द, राम सिंह, घीसाराम आदि अन्य स्वांगकारों ने परिक्षेत्र में स्थान–स्थान पर स्वांग लोककला का मंचन कर खूब नाम कमाया। बुन्दूमीर के स्वांग गरीब की दीवाली' की कुछ पंक्तियाँ देखें।

"बड़े भाग से हमको नेक कमाई मिल गई।
मानो भगीरथ को जैसे गंगे माई मिल गई।।
बुरे की बुराई भले की भलाई मिल गई।
जैसे लंका में हनुमान को जनक की जाई मिल गई।।"

उपर्युक्त लोक कलाओं द्वारा रचित सैकड़ों की संख्या में रचनाएं प्रकाशित अप्रकाशित रूप में उपलब्ध हैं। कालान्तर में 'रामलीला' नाटकों का मंचन भी मेरठ में होता आया है। ये लोक–नाटक रामनवमी पर अभिनीत होते हैं। पहले–पहल पं० नारायण प्रसाद 'बेताब' तथा यशवन्तराय ने 'रामायण' नाटक लिखकर नाटकों का प्रचार किया। रामलीला नाटकों का मंचन कई संस्थाएं करती हैं जिनमें 'रामनाटक क्लब प्रहलाद नगर,' 'श्रीराम नाटक समाज रजबन', 'राम संकीर्तन क्लब घंटाघर' तथा 'राम लीला क्लब शर्मा नगर' के नाम उल्लेखनीय हैं।

'रामलीला' के मंचन के साथ ही यहाँ 'नौटंकी' लोकविद्या की खूब फली–फूली। अनेक पौराणिक, श्रृगांरपूरक, धार्मिक, सामाजिक 'नौटंकी' यहाँ लिखकर मंच पर अभिनीत किए गए। सन् 1856 ई० को मेरठ में ही जन्में 'गुलशन हज्जी' ने 'लव–कुश', 'कृष्ण–सुदामा' 'नल–दमयन्ती', 'हीर–रांझा', यूसुफ–जुलेखा जैसी नौटंकियों की रचना करते हुए लगभग 64 नौटंकिया लिखी और मंचित की। उनकी नौटंकी की पंक्तियाँ हैं –

गुजरी बाजार का वासी हूँ मैं हज्जी मेरा नाम।
शुद्ध हिन्दी में रचना करना, मेरा उत्तम काम।।

मेरठ में नौटंकी के क्षेत्र में दूसरा नाम 1888 ई० को जन्में रहमत का है। इन्होंने अपने द्वारा रचित नौटंकियों का मंचन मेरठ में ही नहीं बल्कि प्रदेश के अन्य बड़े–बड़े शहरों में भी किया। 'ढोला–मारू', 'शाही लकड़हारा', पद्मावत–रतनसैन, 'सरवर–नीर', 'हरिश्चन्द्र', 'राजा भोज सरनदे' इनके प्रसिद्ध नौटंकी हैं। सन् 1903 ई० को मेरठ के ही जन्में पं० परशादी लाल का नाम भी नौटंकियों के लिए जाना गया। 'जाहरपीर' 'लैला–मजनूं', कीचक–द्रोपदी–विराट, इनके विख्यात नौटंकी रहे। इस प्रकार मेरठ परिक्षेत्र में विभिन्न लोककलाएं, लोकरंग धार्मिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक रूपों में जनता के सम्मुख आए। जिन्होंने समय–समय पर समाज को नई चेतना और ऊर्जा से समृद्ध किया। वर्तमान में भी मेरठ तथा इसके ग्रामीण अंचलों में कितनी ही लोककलाएं आज भी जीवित हैं तथा मनुष्य के संस्कारों को परिष्कृत और परिवर्द्धित कर रही है।

मेरठ के हिन्दी साहित्यकार एवं साहित्यिक चेतना

"मेरे नगर, प्यारे नगर, कवि के नगर मेरठ नगर!
ये एक मुट्ठी धूल है तेरे दुलारों में पली
ये मोमबत्ती–सी उमर, थोड़ी रही ज़्यादा जली
तेरे लिए तो तू भीड़ है, मेरे लिए है एक तू
बचपन भरे मेरे नगर, यौवन भरे मेरे नगर।
गीतों भरा जीवन दिया उपकार है इतने किए
सौ जन्म भी उतरे नहीं सपनों भरे मेरे नगर
अपनों भरे मेरे नगर! "

मेरठ के प्रख्यात गीतकार भारत भूषण ने उपर्युक्त पंक्तियों में अपने शहर के लिए हृदय का सारा प्रेम उड़ेल दिया है। कवि इन पंक्तियों के माध्यम से अपने अतीत की स्मृतियों को टटोलता नजर आता है और शहर के उपकार को भुला नहीं पाता क्योंकि इसी शहर ने कवि को सर्वस्व प्रदान किया है। मेरठ से जहाँ 1857 की क्रान्ति का विप्लव गूंजा वहीं राष्ट्रभाषा के व्यापक प्रसार–प्रसार में और साहित्यिक गतिविधियों में भी मेरठ अग्रणीय रहा है। हिन्दी साहित्य के अपभ्रंश काल से ही यहाँ साहित्य लेखन की परम्परा शुरु होती है और उत्तरोत्तर विकसित होती हुई कविता, कहानी, उपन्यास तथा नाटक कई विधाओं में परिष्कृत होती हुई चरमोत्कर्ष को पहुँची है। प्रारम्भिक रचनाओं में मेरठ जनपद के ग्राम माखनपुर मवाना निवासी बनवारीलाल द्वारा रचित 'भविष्यदत्त चरित' (1609 ई०) तथा 'चन्द्रप्रभा चरित' (1725 ई०) बड़ौत (अब जनपद बागपत) निवासी हीरालाल का उल्लेख मिलता है। ये दोनों चरित काव्य है। जिसमें प्रेमाख्यानक काव्य परंपरा के अन्तर्गत कथा की समाप्ति पर किसी धार्मिक प्रवृत्ति को उजागर किया जाना कवियों का लक्ष्य रहा। इन दोनों रचनाओं की भाषा भी ब्रज है। मेरठ जनपद क्योंकि खड़ी बोली का गढ़ रहा है और इस बोली का मूलरूप 'कौरवी' आज भी यहाँ की जनता के संस्कारों में घुला–मिला देखा जा सकता है।

देश में जब नवजागरण की बेला आई तो खड़ी बोली के माध्यम से मेरठ के रचनाकारों ने भी अपनी भावनाओं के माध्यम से आम जन में चेतना के प्राण फूंके। खड़ी बोली में रचना करने वाले मेरठ के साहित्यकारों में संतकवि गंगादास महान् दार्शनिक, भक्त तथा संतकाव्य में राष्ट्रीय भावना का दिग्दर्शन कराने वाले हैं। इनका जन्म दिल्ली–मुरादाबाद राजमार्ग पर स्थित बाबूगढ़ छावनी के निकट रसूलपुर (अब गाजियाबाद) में सन् 1823 ई०, बसन्त पंचमी को हुआ। बसंत पंचमी के दिन आज भी इनके जन्म दिन के अवसर पर कुचेसर चौपले पर स्थित इनकी समाधि पर प्रतिवर्ष मेला लगता है। वर्तमान में लगभग 15 से अधिक शोधार्थियों ने इनकी रचनाओं पर शोघ कार्य किया है। इनकी रचनाओं में भक्ति, दर्शन, समाज का पुट तो है ही साथ ही ऐसे पहले कवि के रूप में भी ये अग्रणीय है जिन्होंने अपनी रचनाओं में ब्रिटिश शासन के प्रति विरोध जताया है :—

"नीतिहीन राजा अन्यायी
वेद विरोधी सठ दुखदाई।।"

× × × ×

"चोरों के इस वक्त पर बरत रहे तप तेज।
भूप दण्ड देते नहीं भई पाप की मेज।।
भई पाप की मेज कचैड़ी लोभी जानो।
नीति तज गई देस पाप भय सबै समानो।।
'गंगादास' कह मुख काले रिश्वत खोरों के।
हाकिम लोभी करैं बरी दावे चोरों के।।"

इनके द्वारा रचित अनेक होली, कुण्डलियाँ, लावनी, भजन, दोहे अपार मात्रा में अप्रकाशित ही पड़े हैं। प्रकाशित पुस्तकों में 'ब्रह्मज्ञान चिन्तामणि' तथा 'तत्वज्ञान प्रकाश' मुख्य हैं। इनके अतिरिक्त भी लगभग 15 पुस्तकें प्रकाशित है। गंगादास के समय में ही खड़ी बोली में रचना करने वाले भक्त कवि शंकरदास ने निर्गुण भजनों के माध्यम से मेरठ में साहित्यिक चेतना की अलख जगाई। इनका जन्म भी सन् 1823 ई० में मेरठ गढ़ मुक्तेश्वर मार्ग पर स्थित जिठौली ग्राम में हुआ। कवि द्वारा रचित निम्नलिखित 'पद' में खड़ी बोली हिन्दी का अत्यंत गठा हुआ रूप दिखाई देता है—

"राज मिला राजा क्यों रोया, जोग मिला रोया क्यों जोगी?
भोग भजे भोगी क्यों रोया, रोग भजे रोया क्यों रोगी?"

इनके द्वारा रचित, 'नागलीला' नल पुराण', तथा 'निर्गुण पदावली' उत्कृष्ट रचनाएं हैं।

हिन्दी के पुरोधा प्रचारक मेरठ के 'पण्डित गौरी दत्त' :—

गौरीदत्त का जन्म सन् 1836 ई० को लुधियाना में हुआ। इन्होंने हिन्दी सेवा तथा उसका प्रचार–प्रसार करने में ही अपना सर्वस्व जीवन न्यौछावर किया। गौरीदत्त आजीवन मेरठ में रहे। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने हिन्दी साहित्य के इतिहास में इनका नाम ससम्मान अंकित किया है।

गौरीदत्त ने हिन्दी प्रचार–प्रसार के लिए अनेक पाठशालाएं स्थापित की वहीं हिन्दी लेखन में अकथनीय योगदान किया। इनके द्वारा रचित पुस्तकों में 'नागरी सौ अक्षर', 'अक्षर दीपिका', 'नागरी की गुप्तवार्ता', 'लिपि बोधिनी', 'देवनागरी के भजन' प्रमुख है। हिन्दी प्रेम में ये ऐसे रंग गए थे कि जनता ने इन्हें 'देवनागरी प्रचारानन्द' और 'हिन्दी का सुकरात' की पदवी से विभूषित किया। देवनागरी के प्रचार–प्रसार हेतु इनके द्वारा रचित गीत की पंक्तियां हैं —

"भजु गोविन्द हरे हरे, भाई भजु गोविन्द हरे हरे।
देवनागरी हित कुछ धन दो, दूध न देगा धरे–धरे।"

इन्होंने 'देवनागरी गजट', 'देवनागरी प्रचारक', देवनागर' नामक पत्रों तथा 'नागरी' पत्रिका का संपादन भी किया। सन् 1870 में प्रकाशित 'देवरानी जेठानी की कहानी' इनका उपन्यास 'हिन्दी का पहला उपन्यास है।

मेरठ के प्रबंध काव्य रचयिता कवि :—

हरिशरण श्री वास्तव मराल का जन्म सन् 1900 ई० को मेरठ शहर में हुआ। साहित्यिक गतिविधियों में ये सक्रिय रहे। गद्य और पद्य दोनों पर इनका समान अधिकार था। कवि 'मराल' की कविता सुनकर एक बार कवि नाथूराम शंकर शर्मा जी अत्यंत प्रभावित हुए और यह पद कहा—

"पीता है भंग, ओढ़ता नाहर की खाल को।
मोती कहाँ से दे उमा, शंकर मराल को।।"

इस पर 'मराल' ने उत्तर दिया :—

"शंकर निहाल देखकर, तब ज्योति जाल को।
कैलाश पर न चाहिए, मोती मराल को।।"

सनातन धर्म धर्मशाला बुढ़ाना दरवाजा, मेरठ में सुनाई गई इनकी कविता की पंक्तियाँ जो बहुत ही ख्यात हुई, इस प्रकार है—

"मगर मैं वह रत्न गर्भा हूँ, कि जो मर जाऊगां फिर भी।
अगर की बत्तियाँ बनकर, जलेंगी हड्डियाँ मेरी।।"

इनके द्वारा रचित प्रबंध काव्य 'हरिश्चन्द्र रचित' उत्कृष्ट रचना है जो इन्होंने 'मार्कण्डेय पुराण' का आधार बनाकर रची थी। लगभग 33 वर्ष की अल्पायु प्राप्त कर मराल जी ने 'बलि वैश्वेदेव यज्ञ', 'शिवबोध' 'हिमगिरि सन्देश', 'प्रार्थना शतक', 'चन्द्र' तथा 'पृथ्वीराज' नामक रचनाएँ देकर हिन्दी साहित्य की श्री वृद्धि की। प्रबंध काव्य रचयिताओं में दूसरा नाम फरवरी 1888 ई० को जन्में कवि शिवाधर पाण्डेय का है। मेरठ में रहते हुए इन्होंने 'वीर विक्रमादित्य' नामक काव्य की रचना की। आठ सर्गो में रचित इस कृति की कुछ पंक्तिया हैं :—

"है कोई विक्रमी बजै अब जिसका डंका।
या होगी अब आज अयोध्या ही में लंका।।
कच्चा हमें चबाएंगे, प्रमदाएं पी जायेगे।
अब घोड़ों की लीद से देवालय भर जायेंगे।
यों बोला बैताल खड़ा विक्रम के आगे।।"

इनकी अन्य प्रकाशित रचनाओं में 'पदार्पण', 'रस वल्लरी', 'शंखनाद', 'पदावली', 'ब्रजगुप्त', 'जवाहर कन्या', 'महाकुम्भ', 'चुनाव चर्चा', कैलाश यात्रा' तथा 'वनमाला' उल्लेखनीय हैं।

महाकवि ताराचन्द्र 'हारीत का जन्म जनपद मेरठ के समीप शिवाया नामक ग्राम में हुआ। इनके द्वारा रचित महाकाव्य 'दमयन्ती' साहित्य जगत में विशिष्ट स्थान पाने का अधिकारी है। चौदह सर्गो में विभक्त यह काव्य सरल भाषा में लिखा गया है। उस समय का प्रसंग देखिए जब अयोध्या के राजा ऋतुपर्ण चमत्कारी सारथी बाहुक (नल) की रथ हांकने की कला से शीघ्रातिशीघ्र कुण्डिनपुर पहुंचने की कोशिश कर रहे हैं :—

"लो उत्तरीय यह गिरा, तनिक रथ रोको,"
"नृप! अब योजन भर दूर उसे अवलोको।"
"क्या इतनी गति से अश्व बढ़े जाते हैं?"
"दृग–सम्मुख जन कब इन्हें देख पाते हैं।"

इसके अतिरिक्त 'महाप्रयाण' नामक खण्डकाव्य भी हारीत जी की श्रेष्ठ रचना है।

रघुवीर शरण 'मित्र' ने आजीवन मेरठ में रहते हुये साहित्य साधना की। गुण और मात्रा, यश और सम्मान सभी कुछ से स्वीकारे गए मित्र जी ने अनेक काव्य ग्रन्थों, कहानी, नाटक, उपन्यास आदि की रचना की। इनके द्वारा रचित 'जननायक', 'मानवेन्द्र', 'भूमिजा', 'विजयवरण' और 'ज्योति पुरुष' नामक पाँच प्रबंध काव्य हैं। कवि 'ज्योतिपुरुष' के एक छन्द में नवीन समाजवाद की परिकल्पना करता दिखाई देता है :—

"अब न वर्ग है भूमि सब के लिए।
न अब बुझ सकेंगे, किसी के दिए।।
सुमन की सुरभि में अमर शान्ति है।
निकलते दिवस में नई क्रान्ति है।।"

'आग और पानी', 'सोने की राख', 'उजला कफन', 'दिन रोया रात हंसी' इनके प्रमुख उपन्यास है। 'राष्ट्र ध्वज', 'भारतमाता', तथा 'पुराने पेड़ नये पत्ते' नाटक भी इनके प्रसिद्ध हुए। इसके अतिरिक्त बालसाहित्य में भी इनकी लेखनी द्रुतगति से चलती रही।

कवि बसन्त सिंह 'भृंग' का नाम लिए बिना प्रबंध काव्य रचयिताओं की चर्चा अधूरी ही रहेगी। उनका काव्य 'बढ़ते चरण थिरकते पाँव' विचारों की क्रान्ति और अनुभूति की तीव्रता के लिए अनुपम है। कवि शासन मुक्त समाज की कल्पना करते हुए कहता है :—

"शासक शासन शस्य हो गये, पुरातत्व के टूटे खण्डहर।
शासन मुक्त समाज उठ रहा, नई चेतना के स्वर भरकर।।"

मेरठ के कई प्रबंध काव्य रचयिता कवि हुए जिनमें मदन गोपाल सिंहल, ब्रह्मनन्द शुक्ल, रघुवीर शरण बंसल, पं० लक्ष्मी चन्द कौशिक 'शिशु', शान्ति प्रसाद बाल भट्ट, बनवारी लाल शर्मा का नाम उल्लेखनीय है।

हिन्दी सेवी, कवि, समीक्षक, पत्रकार, सम्पादक : आचार्य क्षेमचन्द्र 'सुमन'

दिसम्बर 1916 ई० को बाबूगढ़ छावनी में जन्में सुमन जी ने अपनी रचनाओं के माध्यम से आजादी की अलख जगाई। इनके तीन कविता—सग्रंह 'मल्लिका', बंदी के गान', तथा 'कारा' हिन्दी साहित्य की अनुपम निधि है। 'आजादी की कहानी', 'नेताजी सुभाष', 'नए भारत के निर्माता', 'हिन्दी साहित्य नए प्रयोग', 'हिन्दी साहित्य को आर्यसमाज की देन', 'साहित्य विवेचन' तथा 'साठ के बाद हिन्दी की कविता' नामक गद्य पुस्तकें लिखकर इन्होंने साहित्य के नए आयामों से परिचय कराया। 'दिवंगत हिन्दी सेवी' नामक वृहत् ग्रन्थ का लेखन स्वंय में अनूठा है जिसमें हजारों साहित्यकारों का परिचय प्रस्तुत किया गया है।

मेरठ की महिला साहित्यकार : कमला देवी चौधरी तथा होमवती देवी :—

सन् 1908 ई० को लखनऊ में जन्मी कमला चौधरी का विवाह मेरठ के प्रख्यात चिकित्सक जे० एन० चौधरी से हुआ। विवाहोपरान्त मेरठ के साहित्यिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनैतिक क्षेत्र में इनका प्रमुख योगदान रहा। स्वतंन्त्रता आन्दोलन से जुड़कर इन्होंने कई बार जेल यात्रा की तथा देश आजाद होने पर कई सम्मानित पदों पर कर्त्तव्यनिष्ठा पूर्वक काम किया। हिन्दी की श्रेष्ठ कवयित्री और कहानीकार के रूप में इन्हें हमेशा याद किया जाता रहेगा। इनके कहानी— संग्रह हैं— 'पिकनिक', 'उन्माद', 'बेलपत्र', 'प्रसादी कमण्डल' और 'यात्रा'। इन्होंने खैय्याम की रूबाईयों का हिन्दी में अनुवाद भी 'खैय्याम का जाम' नाम से किया। 'आपन मरन जगत कै हांसी' इनकी हास्य व्यंग्यात्मक कविताओं की पुस्तक है। इसके साथ ही बाल साहित्य के क्षेत्र में इनकी पुस्तकों में 'मैं गाँधी बन जाँऊ' तथा 'चित्रों में लोरिया' प्रमुख है।

सन् 1908 ई० को मेरठ के प्रसिद्ध पत्थर वाले परिवार में होमवती देवी का जन्म हुआ। 'मेरठ की महादेवी' के नाम से मेरठ के साहित्य जगत में प्रतिष्ठित हुई होमवती देवी के गीतों में पीड़ा, अवसाद, वेदना की मिठास तथा साथ ही श्रृंगार के दर्शन हो जाते हैं। इनके जीवन की पीड़ा तथा वेदना इनके गीतों में उजागर हुई है—

"उर में उमड़ा पीड़ा—वारिधि
जीवन में बरसे अंगार।
जीवन—धन को खोकर मैंने,
पाया कविता—धन उपहार।।"

इनका निवास स्थान वर्षों तक देश के अनेक साहित्यकारों की साहित्य साधना करने का स्थान रहा। हिन्दी की श्रेष्ठ कवयित्रियों में गिनी जाने वाले होमवती देवी का प्रथम काव्य—सग्रंह 'उद्गार' नाम से सन् 1936 ई० में प्रकाशित हुआ। इसके पश्चात् 'अर्ध्य' नामक काव्य—संग्रह प्रकाश में आया। गद्य के क्षेत्र में भी आपका विशिष्ट योगदान रहा। इनके कहानी— संग्रह हैं— 'स्वप्न भंग (1948) 'निसर्ग' (1939), 'अपना घर (1950), तथा 'धरोहर'। इनकी कविताएँ मेरठ से प्रकाशित 'प्रतिच्छाया' और 'झंकार' नामक काव्य— संग्रहों में अन्य कवियों के साथ भी छपी है। 'सिन्दूर' फिल्म का कथानक होमवती देवी की कहानी 'गोटे की टोपी' पर आधारित है। इन्होंने मेरठ में 'हिन्दी साहित्य परिषद्' की स्थापना की। उस समय 'सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन' 'अज्ञेय' लम्बे समय तक इनके पास मेरठ में ही रहते थे। लगभग 50 से अधिक कहानियाँ व कविताएँ इनकी अप्रकाशित है।

इनके अतिरिक्त मेरठ की धरती ने महिला साहित्यकारों में चन्द्र किरण सौनरेक्शा को जन्म दिया। ये 'छाया' उपनाम से साहित्य रचना करती रही। इनकी कहानियाँ कई भाषाओं में अनुदित हुई। 'आदमखोर' कहानी—सग्रंह पर इन्हें 'सकसरिया पुरस्कार' मिला। 'सरोजनी देवी वैधा'

भी मेरठ की साहित्यकार रही जिन्होंने महिलाओं से संबंधित अपार साहित्य की रचना की जो उनकी पुस्तक 'महिला जीवन' में संकलित है। 'शैल रस्तौगी' तथा पद्मा शर्मा 'साधिका' भी मेरठ की प्रसिद्ध गीतकार रही जिन्हें 'हाइकु' के क्षेत्र में पर्याप्त यश प्राप्त हुआ।

फिल्म जगत् में नाम अर्जित किया मेरठ के साहित्यकार पं० मुखराम शर्मा तथा सरस्वती कुमार `दीपक' ने :—

पं० मुखराम शर्मा का जन्म ग्राम–पूठी, जनपद–मेरठ में सन् 1909 ई० को हुआ। विल्वेश्वर संस्कृत महाविद्यालय से इन्होंने शिक्षा प्राप्त की। उपन्यासकार एवं कहानीकार के रूप में इनकी पर्याप्त प्रसिद्धि हुई। कहानी कला का विस्तृत अनुभव पंडित जी का अनूठा था। इन्होंने लगभग 90 फिल्मों के कहानी और संवाद लिखे। चित्रपट कथा लेखकों में इनका नाम ससम्मान लिया जाता है। 'मयराष्ट्र मानस' में इनके विषय में उल्लेख है–

"उपन्यास सम्राट मुंशी प्रेमचन्द और डा० धनीराम जैसे महारथी भी जिस फिल्मी क्षेत्र से सूखी लेखनी लिए वापस लौटे उसी पर पं० मुखराम शर्मा एक बारगी ऐसे छा गए कि सर्वत्र हिन्दी फिल्मों की मांग होने लगी। फिल्मी कथाओं से उर्दू को ढकेलकर उसके स्थान पर हिन्दी को प्रतिष्ठित करने का श्रेय मात्र पंडित जी को प्राप्त है।"

मुखराम शर्मा को तीन बार फिल्म फेयर अवार्ड मिला। सर्वश्रेष्ठ कहानीकार के लिए इन्हें संगीत नाटक अकादमी की ओर से राष्ट्रपति द्वारा सर्वोच्च पुरस्कार से नवाजा गया। थापर नगर, मेरठ में 'वरदान' नाम से आज भी इनका मकान स्थित है।

सरस्वती कुमार 'दीपक' भी मेरठ की ऐसी ही साहित्यिक हस्ती थे जिन्होंने फिल्मी साप्ताहिक 'चित्रपट' में कुछ समय काम किया और बंबई की फिल्म कम्पनी 'फजली ब्रदर्स' तक पहुँचे और फिल्मों के लिए गीत लेखन किया। इनके द्वारा रचित कविताएं हिन्दी की चोटी की पत्र–पत्रिकाओं 'धर्मयुग', 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' में निरंतर प्रकाशित होती रही। एक गीतकार के रूप में इनकी ख्याति देश में फैली।

नाटककार : विश्वम्भर सहाय `व्याकुल' :–

मेरठ शहर में सन् 1870 ई० को जन्में 'व्याकुल' ऊर्दू, फारसी, अरबी आदि कई भाषाओं के ज्ञाता, हिन्दी के कवि एवं नाटककार के रूप में परिक्षेत्र में खूब प्रसिद्ध हुए। फारसी थियेट्रिकल कम्पनियों के आधिपत्य से हिन्दी रंगमंच को मुक्त कराकर इन्होंने हिन्दी के नाटक अभिनीत किए। इनके द्वारा रचित नाटक 'बुद्धदेव' का मंचन नाट्य क्षेत्र में अलग पहचान रखता है। इस नाटक का धारावाहिक प्रकाशन सबसे पहले मेरठ से ही मुरारीशरण मांगलिक तथा उमराव सिंह कारूणिक के सपांदन में 'ललिता' नामक पत्रिका में हुआ। नाटककार के देहावसान के पश्चात् इस नाटक का प्रकाशन हुआ। नाटक की भूमिका लाला भगवानदीन ने लिखी थी तथा रामचन्द्र शुक्ल ने परिचय प्रस्तुत किया था। व्याकुल जी की नाटक कला का मुख्य उद्देश्य तत्कालीन अंग्रेज शासकों के अत्याचारों, अनाचारों को उजागर करना तथा उनके विरुद्ध क्रान्ति और विद्रोह की भावना पैदा करना था। इन्होंने 'सत्य हरिश्चन्द्र' तथा 'संगीत पद्मिनी' नामक नाटकों की रचना भी की थी।

मेरठ की पत्रकारिता के दिग्गज : उमराव सिंह `कारुणिक' तथा विश्वम्भर सहाय `प्रेमी' :–

1895 ई० को मेरठ में ही जन्में साहित्यकार 'कारुणिक' की साहित्यिक पत्रकारिता से मेरठ की जनता परिचित ही होगी। इन्होंने सर्वप्रथम हस्तलिखित पत्र 'दरिद्रनारायण' से पत्रकारिता की शुरुआत की। इसके पश्चात् 'ललिता' पत्रिका के संपादक हुए। उक्त पत्रिका के माध्यम से संपादक ने मेरठ में अनेक युवकों को साहित्य का ककहरा सिखाया तथा साथ ही रवीन्द्रनाथ ठाकुर, टालस्टाय जैसे लेखकों की रचनाओं से भी पत्रिका के माध्यम से जनता रुबरू हुई। इनकी रचनाओं में 'कारनेगी और उनके विचार,' 'टालस्टाय की आत्मकहानी', अकबर और उनका काव्य', 'उपयोगितावाद', 'मेरा विश्वास', 'मुगलों के अंतिम दिन', 'अनारकली' प्रमुख पुस्तकें हैं।

19 जुलाई सन् 1899 ई० को फरीदनगर कस्बें, मेरठ (अब गाजियाबाद) में जन्में 'प्रेमी' जी ने अपना सर्वस्व जीवन मेरठ की सांस्कृतिक, साहित्यिक एवं सामाजिक गतिविधियों में समर्पित किया। सन् 1923 ई० में इन्होने 'मातृभूमि' नामक साप्ताहिक पत्र निकाला तथा सन् 1933 ई० में 'तपोभूमि' मासिक पत्र का संपादन किया। आज़ादी के पश्चात् इन्होंने 'पंचायतीराज' की स्थापना कर अपने जीवन को राष्ट्र के नवनिर्माण की ओर मोड़ दिया। मेरठ में अनेक सस्थंाओं की स्थापना की। 'प्रेमी' जी पत्रकार होने के साथ ही अच्छे कवि तथा लेखक भी थे। दिवगंत हिन्दी सेवी भाग–1 के पृष्ठ 544 पर क्षेमचन्द्र 'सुमन' ने प्रेमी जी का परिचय देते हुये लिखा है:—

"श्री प्रेमी जी मेरठ के साहित्यिक जागरण का ऐसा स्रोत थे जिनके माध्यम से वहाँ के वातावरण में हिन्दी कविता तथा साहित्य के प्रति सहज प्रेम उद्भूत हुआ है। जो लोग मेरठ के पुराने इतिहास से थोड़ा–सा भी परिचय रखते है, वे हमारे इस निष्कर्ष से सर्वथा सहमत होंगे। नौचंदी मेले के अवसर पर प्रतिवर्ष होने वाले कवि–सम्मेलनों के संयोजन का भार प्रारम्भ में प्रेमी जी ने ही अपने कंधों पर उठाया था और इनके माध्यम से यहाँ की जनता में हिन्दी काव्य के प्रति जो रूचि जागी थी उसी का प्रतिफलन आज यह है कि यहाँ के अनेक लेखक, कवि, पत्रकार तथा साहित्यिकार देश के विभिन्न क्षेत्रों में गौरव वर्द्धन कर रहे हैं। 'अनाथ सरला', 'अभागिनी कमला', 'सती निर्मला', 'आत्मविजय (उपन्यास), 'सम्राट अशोक' तथा 'सम्राट हर्षवर्द्धन (नाटक) प्रेमी जी की प्रसिद्ध रचनाएँ हैं।

मेरठ की इस साहित्यिक पृष्ठभूमि को देखकर अनुमान लगाया जा सकता है कि यह जनपद सामाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक गतिविधियों के साथ ही साहित्यिक गतिविधियों का भी प्रमुख केन्द्र रहा। यहाँ अनेक ऐसे साहित्यकार हुए जिन्होंने अपनी रचनाओं के माध्यम से पूरे देश में नाम कमाया है। खड़ी बोली, जो आज सम्पूर्ण देश की राष्ट्रभाषा है, इसका उद्गम स्थल भी मेरठ ही रहा है। वर्तमान में भी साहित्यिक गतिविधियों में मेरठ कमतर नहीं है। 'प्रगतिशील साहित्यकार परिषद्', 'अखिल भारतीय साहित्य कला मंच', 'नवचेतना स्वरसमूह', 'सृजन', 'वाणी फाउण्डेशन' तथा 'अखिल भारतीय साहित्य दर्पण, जैसी साहित्यिक संस्थाएं आज भी साहित्यिक गतिविधियों में निरंतर सक्रिय है।

लोकगीतों में झलकता है, मेरठी जनजीवन

भारत के इतिहास में उत्तर प्रदेश के मेरठ जनपद का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। लोकगीत अमर रचना है और वह देश–काल की सीमाओं को स्वीकार नहीं करते। इसी कारण नए–पुराने और एक तथा दूसरे प्रान्त के गीत मिल जुलकर सदा चलते रहते हैं। भारत जैसे महान देश को एक विशाल सांस्कृतिक सूत्र में बाँध–कर रखने का श्रेय लोकगीतों को है। मेरठ खड़ी बोली प्रान्त का हृदय है, जिसकी सीमाएँ एक ओर पंजाब के पैशाची प्राकृत–प्रदेश तथा दूसरी ओर शौरसेनी के मृदुभाषी ब्रज–जनपद से मिली हुई हैं। दिल्ली से निकटता के कारण यहाँ की बोली में अरबी–फारसी तथा अन्य विदेशी भाषाओं के शब्द भी बड़ी मात्रा में सम्मिलित हो गए हैं, जिनका प्रचलन यहाँ की जनता में खूब है। मेरठ की बोली में लक्षणा, व्यंजना की प्रधानता है, जो यहाँ के निवासियों के विनोदी स्वभाव का परिचय देती है।

मेरठ खड़ी बोली का क्षेत्र और शर्करा–प्रान्त है, जिस तरह ईख के कठिन छिलके के भीतर तरल मधुर रस भरा होता है, ऐसे ही मेरठ की जनपदीय बोली में भी मधुर कोमल भावनाओं की कमी नहीं है। महादेवी वर्मा के शब्दों में –"सुख–दु:ख की भावावेशमयी अवस्था विशेष को गिने–चुने शब्दों में स्वर साधना के उपर्युक्त चित्रण कर देना ही गीत है और इस गीत में जब सहज चेतना जुड़ जाती है तो वह लोकगीत बन जाता है। लोकगीत गगनचुम्बी हिम श्रेणियों के बीच में एक ऐसा सजल आलोकोज्वल मेघखण्ड है जो न तो इनके टूट–टूट कर गिरने वाले शिलाखण्डों से दबता है और न इन श्रेणियों की सीमाओं से आबद्ध होकर ससीम बनता है। प्रत्युत उन चोटियों का श्रृंगार करता है और संगीत लहरी के प्रत्येक स्पन्दन–कम्पन्न के साथ उड़कर, उस विशालता के कोने–कोने में मादकता का सागर प्रस्तुत करता है।"

लोकगीत माधुर्य, उल्लास और संवेदना के अक्षय स्रोत आदिम युग से इसलिए रहे हैं, क्योंकि समाज उसमें स्वयं को अभिव्यक्त करता रहा है। ये गीत निसर्ग की गोद में आकर ग्रहण करते हैं और सतत् परिवर्तन ग्रहण करते हुए युग–युग तक अपनी आवाज की गूँज बनकर प्रसारित होते रहते हैं। इन गीतों ने परिवर्तनशील समाज के प्रभाव के अनुसार परिवर्तन की प्रक्रिया में निरंतर अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है क्योंकि यह समृद्ध वाचिक परम्परा एक ओर तो वेदों की भांति अपौरुषेय और शाश्वत हैं, पारम्परिक है, दूसरी ओर उसमें समय के प्रवाह को पहचानने और उसके अनुरूप परिवर्तन ग्रहण करके स्वयं को ढालने की भी क्षमता है :–

हिन्दू गृहस्थ के जीवन में आदि से लेकर अंत तक मंगलोत्सव गान होते हैं। मंगल गीत पृथक–पृथक अवसर पर गाए जाते हैं। इनमें 'बिहाई' (जन्मोत्सव गीत) पुत्र जन्म के अवसर पर गाये जाने वाले गीत हैं। गर्भाधान की अवस्था, शारीरिक एवं मानसिक स्थिति, प्रसव पीड़ा, नेग का लेन–देन, गुप्त–प्रेम आदि इन गीतों के मुख्य विषय हैं।

आज तो बधावा बाजे रंग महल में।
हरे–हरे गोबर अंगन लिपाया, मुतियन चौक पुराओं री रंग महल में।
कुंभ कलस अमरत भर लाओ, अम्बा की डाल झुका ओरी रंग महल में।
जिस तलै बैठें रानी, संग सजन की धीय री रंग–महल में।।
बहन भानजी करें आरता झगड़त अपना नेग री रंग–महल में।
खन–खन चूड़ी, मोती के गजरे और दरिवनरो चीर री रंगमहल में।।

उपर्युक्त पंक्तियाँ कानों में अलग रस घोलती हैं। यह लोकगीतों में व्याप्त समूह–भावना का परिणाम है जो उक्त अवसर पर शुद्ध–परिहास के रूप में प्रकट हुई है। इस भाँति जन्म के अवसर पर गाए जाने वाले गीत लोक–व्यवहार का सम्यक्–ज्ञान कराने वाले तथा मनोरंजनकारी हैं।

विवाह संबंधी गीतों में सुहाग अथवा 'लाडो' नाम के गीत अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं। ये गीत कन्या की मनोभावनाओं के शब्द–चित्र हैं। वांछित वर एवं सुखी दांपत्य की कामना, परिजनों को कर्तव्य बोध कराना, उपदेश आदि इन गीतों के प्रमुख विषय हैं। 'विदा गीत' करुणा के साथ कन्या को विदा करते समय गाया जाता है। गीतों में कन्या कहती है कि मेरे चले जाने पर यहाँ अमुक–अमुक काम नही होगा और उसके पारिवारिक जन 'दुहिता दुहिता दूरेहिता' का पाठ पढ़कर उसे घर से बाहर करने पर तुले हैं।

इन गीतों की करुणा से वह अजस्त्र स्रोत फूटता है, जिसके प्रवाह में बड़े–बड़े धैर्यवान नहीं रुक पाते। घर से बेटी के 'विदा' होते समय यह करुणामय गीत सुनकर कौन पाषाण हृदय है जो विचलित न हो उठेगा :–

हम तो बाबुल, झाड़ों की चिड़ियां हाथ उठाए उड़ जाएं।
हम तो बाबुल, तेरे खिरक की गैया जित हांको हकिं जायं।।
काहे को ब्याही बिदेस, रे सुन बाबुल मेरे।

कांपते स्वरों में गाया जाने वाला यह लोकगीत विशेष करुणोत्पादक है। विवाहित बालिका कितनी अपरिचित और सहसा विवश हो जाती है।

विवाह संस्कार सम्पन्न होने के बाद गौने की प्रथा होती है। एक निश्चित शुभ–मुहूर्त में लड़का कुछ सम्बन्धियों को लेकर विदा कराने आता है। इस अवसर पर लेन–देन भी होता था। आजकल गौने की प्रथा का महत्व घट गया है। विवाह के साथ ही 'पट्ठा–फेर' (गौना) कर दिया जाता है :–

कहियो ससुर समझाय
ए, गौनो तो जल्दी लीजि।
बगियों में पके हैं अनार महक
ए महक फैली गलीन में। चालो ए जल्दी कीजिए।

कन्या तथा पुत्र के विवाह की तिथि निश्चित होने के पश्चात् मां अपने भाइयों को विवाह में आने का निमंत्रण देने जाती है। इसे 'भात न्योतना' कहते हैं। इस अवसर पर वह अपने साथ गुड़ की भेली, मिश्री, मेवा और कलावा ले जाती है। भातई भात भरने आते हैं। भात के गीतों का प्रमुख वर्ण्य विषय भाई से विवाह में सहयोग की प्रार्थना है :–

अरी बिर, नदिया के उल्ली–पल्ली पार तो
किस के तम्बुआ तन रहे।
अरे बिर, कौन बहन के हो बीर
किस राजा के भातई।।
अरी बिर अपनी बहन के हैं बीर
अपने जीजा के भातई।
अरी बिर, मिलले ना नैन झकोर
हम परदेसी भातई।।

कुछ गीतों में 'जागरण–गीत', 'बधावे', और 'भात' सुन्दर हैं, और भातों में हास्य और करुणा का अच्छा संकर हुआ है। यह गीत भाई–बहिन के उत्कृष्ट स्नेह के उदाहरण हैं। जागरण गीतो के अन्तर्गत गाए जाने वाले मेहँदी, दिवला, तिलवा दाँतुन नाम के गीत भावपूर्ण हैं, तथा विवाह के और गीतों की अपेक्षा लम्बे भी होते हैं। लड़के के विवाह में गाए जाने वाले मांगलिक गीत 'बन्ने' के नाम से प्रसिद्ध है। इनमें विशेषकर वर का सौन्दर्य, श्रृंगार, वैभव का वर्णन होता है। जैसे –

सेर मोती वारुं री बने पै।
वारुं री बने पै वार डालूं री बने पै ।।सेर...
बाबा तो वारें उनके मौहर असरफी
दादीवारी जायरी बने पै।। सेर...
ताऊ तो वारें उनके मौहर असरफी
ताई तो वारी–वारी जायरी बने पै। सेर...

मेरठ जनपद के ग्रामों में सावन की गीतों को 'पंजाली' के गीत कहा जाता है। इन गीतों में श्रृंगार का विशद् वर्णन हुआ है, यद्यपि विरह प्रधान है। सावन के अनेक गीत अपने आकार और लयात्मकता के लिये प्रसिद्ध है। पंजाली के गीत की कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार हैं :

इन्दर राजा बाग्गों झुक रए जी।
कात्तन तू वण हे री सास्सु हम गईं जी
राजी कोई सुणियाई नवी–नवी बात इन्दर राजा...

फागुन का महीना मेरठ की प्रकृति के अनुकूल है। इस समय काश्ताकार अपने श्रम का साकार रूप निहार कर खुश हो जाता है और खुशी से नाच उठता है। स्त्रियाँ और पुरुष रात–रात भर होली गाते रहते हैं। स्त्रियों के फागुन के गीत 'पटके' कहलाते हैं, जिनको वह मंडलाकार नृत्य करती हुई, एक–दूसरे की हथेली में हथेली मारकर, ताल उत्पन्न कर गाती हैं। ब्रज में रसिया की तरह 'होली' मेरठ जनपद का अपना गीत है। 'होली' के गीत भी होली नाम से पुकारे जाते हैं। इसमें लौकिक आध्यात्मिक, गृहस्थ, सामाजिक व राजनीतिक–कोई विषय छूटा नहीं है। मेले उत्सव तथा सामयिक गीतों से स्त्रियों की प्रवृत्ति का खूब परिचय मिलता है इस प्रकार के गीत 'राही गीत' कहलाते हैं, और उनको स्त्रियाँ यात्रा में गाती है, जैसे– गंगा तेरी लहर, हमारे मन भायी रे।

बन गए राम हुआ न कोई साथी।
हुआ न ब्रजवासी। बन गए...

मेरठ में अन्य क्षेत्रों की तरह कृषि–कर्म से संबंधित गीत पर्याप्त मात्रा में है। इनमें 'कोल्हू' पर गाए जाने वाले 'मल्होरे' अतीव सुन्दर हैं, उपयोगिता की दृष्टि से तो ऐसे गीत महत्वपूर्ण हैं ही, साथ ही इनसे ग्राम–जनों का मनोरंजन और ज्ञानवर्द्धन भी होता है। कृषकों के गीतों के अतिरिक्त कुछ अन्य समुदायों के गान इस जनपद में विशेष हैं – जैसे जोगियों के साके', पँवाड़े तथा धोबियों के खंड 'पद' भजनादिं मेरठ में शिवोपासना की प्रधानता है, इसलिए स्त्रियाँ भावुक अधिक होने के कारण संतों की पूजा–पद्धति की अपेक्षा इससे अधिक प्रभावित हुई हैंः–

मैं तो भिलनी जात गमारी
सदा शिव क्या पूछो बात हमारी।
हाथ बुहरिया, बगल टोकरिया, भोले की कुटिया में आई
भोर भए नित अंगन बुहारू
तीन लोक से न्यारी। सदा शिव....

गीत का आधार लेकर इतिहास किस भाँति जीता है, यह इन गीतों से सहज जाना जा सकता है। इसी प्रकार स्त्रियों के गीतों में भी समय–समय पर घटित होने वाली घटनाओं, जन–आंदोलनों अथवा सार्वजनिक संकटों के उल्लेख भरे पड़े हैं।

आज यह ज्वलन्त प्रश्न प्रायः उठाया जा रहा है कि हमारी संस्कृति खतरे में है। इस खतरे के दो प्रमुख कारण हैं–एक तो समूह संचार साधनों का दबाव और दूसरा संस्कृति को उपभोग की वस्तु मानने वाली दृष्टि। इलेक्ट्रॉनिक मीडिया द्वारा प्रसारित कार्यक्रमों में एकरुपता अधिक रहती है, विभिन्नता कम। 'लोक संस्कृति' की एक विशेषता है कि वह एक होते हुए भी थोड़े–थोड़े अन्तर से अलग–अलग विकसित होती रही है, जिसके कारण उसकी विविध रंगते हैं। गाँव का प्रवेश शहर में अगर कहीं दिखाई देता है, तो वह लोक साहित्य के माध्यम से, किन्तु इधर फिल्मी धुनों का लोकगीतिकरण, उसकी सहजता पर बुरी तरह प्रहार कर रहा है। चाहे लोकगीतों की धुनों का फिल्मीकरण हो या फिल्मी धुनों का लोकगीतिकरण, दोनों ने ही इस सहज विधा को बहुत प्रभावित किया है। इन समस्त चुनौतियों को स्वीकार करते हुए लोकगीतों की नई राह बनानी है।

फिल्मी गीतों के बढ़ते प्रभाव से लोकगीत लोगों की जुबान से उतरते जा रहे हैं, अनेक ऐसे फिल्मी गीत ही लोकप्रिय हुए है जिनमें फूहड़पन झलकता है, और जो मनोवृत्ति को भी भ्रमित दिशा प्रदान करते हैं, दूसरी ओर लोकगीतों में भारतीय संस्कृति, भारतीय जनजीवन, और मानवीय संवेदनाओं की अभिव्यक्ति होती है।

इसलिए जरूरी है कि समाज में रुचिकर गीतों के प्रचार–प्रसार के लिए लोकगीतों के संरक्षण पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। मेरठ कौरवी बोली का क्षेत्र है, यहाँ "चौ० चरण सिंह विश्वविद्यालय', हिन्दी विभाग" में जो कौरवी पर कार्य हुआ है, उसमें लोकगीतों के शोध पक्ष पर विशेष अध्ययन किया गया है। इसी तरह के कार्य अन्य क्षेत्रों में अपेक्षित है, ताकि लोकगीतों की विधा जीवन्त बनी रहे।

कला जगत में मेरठ परिक्षेत्र का स्थान

किसी भी प्रदेश की संस्कृति उसकी कलाओं में व्यक्त होती है। कला प्रदर्शन के विभोर क्षणों में मनुष्य पर अन्तर्मन का जितना अधिकार रहता है, वैसा किसी और समय नहीं। कला के विकास की पृष्ठभूमि में वहाँ की प्रकृति, भूमि, जलवायु, वनस्पति, धर्म और दर्शन सभी का महत्वपूर्ण योगदान रहता है। इस परिप्रेक्ष्य में मेरठ परिक्षेत्र के विगत शताब्दी के इतिहास पर दृष्टिपात करने से ज्ञात होता है, कि लोक संस्कृति, 1857 की क्रान्ति, खेल सामग्री, कैंचियों, चीनी मिट्टी के बर्तनों आदि विभिन्न क्षेत्रों में अग्रणी रहने के साथ–साथ यह क्षेत्र ललित कलाओं का भी महत्वपूर्ण केन्द्र रहा है। मेरठ का प्राचीन नाम 'मयराष्ट्र' था अर्थात 'मय' (दानवों) का राष्ट्र।

वैदिक युग के सप्त सिन्धु प्रदेश में स्थित मयराष्ट्र क्षेत्र के जन्म एवं विकास का विषय भूगर्भशास्त्रियों के अनुसंधान का एक विशेष अध्याय रहा है। आज तक यह क्षेत्र भारतीयें ऋषियों एवं मुनियों का आश्रय स्थल रहा है। इसी क्षेत्र से भारत के गौरवपूर्ण इतिहास के पन्ने जुड़े हुए हैं।

मेरठ परिक्षेत्र का इतिहास लगभग पाँच हजार वर्ष से भी अधिक प्राचीन है। यह क्षेत्र गंगा तथा यमुना के मध्य स्थित है। राजधानी दिल्ली के समीप होने के कारण यह परिक्षेत्र प्रारम्भ से ही सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक क्रिया–कलापों का केन्द्र रहा है। उत्तर वैदिक कालीन कुरू वंशीय राजाओं की केन्द्रीय सत्ता के साक्षी मेरठ परिक्षेत्र के पुरातात्विक स्थलों जैसे – हस्तिनापुर के खण्डहर एवं हड़प्पा कालीन स्थलों आलमगीरपुर मांडी व बरनावा आदि से महाभारत, रामायण, बुद्धकाल एवं राजपूत काल के अवशेष प्राप्त हुए हैं।

मेरठ परिक्षेत्र की प्राचीन इमारतों, मन्दिरों, धर्मशालाओं तथा भवनों के खण्डहरों पर की गई कलाकारी को देखकर हम कह सकते हैं कि यहाँ का कला से सम्बन्ध बहुत पुराना है।

मेरठ के समीप फलावदा ग्राम में 9वीं शताब्दी के प्रतिहारकालीन मन्दिर के उत्कीर्ण स्तम्भ शीर्ष तथा मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं। जो उस समय की मूर्तिकला के अद्‌भुत उदाहरण हैं। इन ध्वंसावशेषों की खोज मेरठ कालिज के प्रोफेसर बी० आर० चटर्जी को अनायास ही एक टोले से प्राप्त जानकारी से हुई थी। इन प्रस्तरखण्डों के अंकन तथा शिल्प पर मेरठ कॉलिज के कला विभाग के डा० रामअवतार अग्रवाल द्वारा लिखित शोध पत्र 1973 में 'मयराष्ट्र मानस' में प्रकाशित हुआ। इसके अतिरिक्त सूरजकुण्ड से प्राप्त प्रतिहार काल के रामायण पैनल्स भी मेरठ के गौरव को प्रकट करते हैं।

1950 से 1952 तक हस्तिनापुर में पुरातत्व वैज्ञानिक प्रो० बी० बी० लाल के निर्देशन में हुई खुदाई से चित्रित धूसर मृद्‌भाण्ड संस्कृति के प्रचुर मात्रा में अवशेष प्राप्त हुए हैं। साथ ही अति प्राचीन देवी–देवताओं में नैमीनाथ हुए अरहनाथ, अंबिकादेवी की मूर्तियाँ भी प्राप्त हुए हैं। आज भी हस्तिनापुर के टीले अपने गर्भ में भारतीय कला इतिहास की अमूल्य धरोहर छुपाये हुए हैं।

महाभारत कालीन हस्तिनापुर के ऐतिहासिक पांडेश्वर मन्दिर की परकोटा पत्थर से निर्मित मुख्य द्वार की चौखट में शिल्पकला की बेजोड़ झलक दिखाई देती है। आलंकारिक देव नगरी तथा जैन धर्म के तीर्थ हस्तिनापुर में जंबू द्वीप तथा जैन श्वेताम्बर मन्दिरों की श्रृंखला अत्यधिक कलात्मक आलेखनों द्वारा निर्मित की गयी है। मुख्य द्वार के कलात्मक तोरण पर की गयी पच्चीकारी, ऐरावत हाथी तथा छत के बहुपत्ती अलंकरण यहाँ के प्रमुख आकर्षण हैं। प्राचीन शैली की नक्काशी इसके ऐतिहासिक महत्व की साक्षी है।

इसी प्रकार मेरठ शहर में रेलवे मार्ग पर निर्मित जैन मन्दिर भी अपने कलात्मक सौन्दर्य के लिये प्रसिद्ध है। पत्थर की बारीक व आकर्षक कारीगरी बरबस ही अपनी ओर आकृष्ट कर लेती है। गुलाबी पत्थर में राजस्थानी कलाकारों का हस्त कौशल यद्यपि अति प्राचीन नहीं है तथापि इसकी भव्यता उन्हीं सिद्धहस्त कलाकारों की याद ताजा कर देती है।

मेरठ की धरती पर सबसे पहले उतरने वाले कलाकार स्व० भवानी मित्तल थे। जिन्होंने लखनऊ आर्ट्स कालिज से शिक्षा ग्रहण की थी तथा 'धर्मयुग' में उनके चित्र अक्सर छपते रहते थे। मेरठ परिक्षेत्र के चित्रकारों में इन्दजीत, श्री शंकर रस्तौगी, श्री मोहन का कलाकार्य भी अविस्मरणीय है। शिक्षा के क्षेत्र में अग्रणी रहे प्रो० आर० एन० टंडन व प्रो० सी० एल० झा का नाम भी प्रसिद्ध रहा है। प्रो० सी० एल० झा० द्वारा कला विषय की उपयोगी पुस्तकें भी लिखी गई हैं।

मुजफ्फरनगर के डा० शुकदेव श्रोत्रिय जलरंगों में दृश्यांकन करते रहे हैं। उन्होंने प्राकृतिक सौन्दर्य से भरपूर घाटी तथा

विभिन्न स्थानों के दृश्यों को नैसर्गिक प्रकाश के विभिन्न प्रभावों के साथ चित्रित किया है। यद्यपि उनके दृश्य चित्र पर्याप्त दृश्यमूलक हैं तथापि उनमें पर्वतों का विस्तार एवं प्रकृति की उन्मुक्तता दर्शकों को विशेष आकर्षित करती है। दृश्य चित्रांकन में वे आजकल कुछ नवीन प्रयोगों में व्यस्त हैं। मेरठ के डा० रामअवतार अग्रवाल भी मुख्य रूप से प्रभाववादी दृश्यांकन के लिये प्रसिद्ध रहे हैं। विभिन्न पहाड़ी सभ्य स्थलों का भ्रमण करने के कारण उन्होंने पर्वतीय प्राकृतिक अनुभवों का पहले यथार्थवादी और अब अमूर्त चित्रण अत्यधिक नवीनता के साथ प्रस्तुत किया है। पर्वतों के विस्तार, पानी में उनके प्रतिबिम्ब के प्रभावों, विशालकाय पर्वतों की दरारों के प्रभाव, घने वनों के मध्य से छनकर आती प्रकाश किरणों और प्रकृति की विविधता की उन्होंने जल, तैल तथा विभिन्न धरातलीय प्रभावों के माध्यम से सृष्टि की है। कला लेखन की ओर रूचि होने के फलस्वरूप आपने 'हिस्ट्री आर्ट एण्ड आर्किटेक्चर ऑफ जैसलमेर', 'मारवाड़ म्यूरल्स', 'वाल पेन्टिंग्स ऑफ सैन्ट्रल इण्डिया', 'द सिटी ऑफ पेन्टेड वाल्स–बूंदी', 'कला विलास' तथा ' 'चित्रा संयोजन' आदि अनेकानेक पुस्तकें लिखीं। जो कला क्षेत्र को उनकी अमूल्य भेंट है।

दृश्य चित्रण की भावना से प्रभावित होकर अपने समीप की दृश्यावलियों का आकर्षक रंगों द्वारा चित्रण करने वाले सतीशचन्द्र (गाजियाबाद) दूर तक फैले घास के मैदान, हवा से भरपूर, खेत, आकाश एवं वृक्षों के झुरमुट आदि प्रभावों की सृष्टि करते हैं। रंगों के छोटे–छोटे बिन्दुओं के प्रयोग से हवा में उड़ते हुए परागकणों का आभास उनकी कला शैली की पहचान बन गया है। डा० बद्री वर्मा (खतौली) के गहरे रंगों से निर्मित दृश्य चित्र घने बादलों से आच्छादित आकाश एवं रहस्यमयी प्रभावों से सृष्टि करते हैं।

डॉ० शिवकुमार शर्मा (मेरठ) प्रयोगात्मक तथा आकृतिमूलक दोनों ही प्रकार के कार्य करते रहे हैं। इधर उन्होंने रिलीफ कार्य द्वारा भी आकर्षक कृतियों का सृजन किया है। डा० रामअवतार अग्रवाल के साथ आपकी पुस्तक 'रूपप्रद कला के मूलाधार' अत्यन्त प्रशंसनीय व उपयोगी रही है। डा० दिनेश शर्मा (मेरठ) छत्तीसगढ़ के जनजीवन में समायी लोककला एवं लघु चित्रों से प्रभावित रहे हैं। उनके चित्रों में आदिवासी जीवन से संबंधित विभिन्न पहलुओं का मोहक अंकन सहज ही दर्शकों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर लेता है। लोक कला की सरलता, लघु चित्रों के समान सुन्दर आकृतियाँ, चटक व आकर्षक रंग–योजना उनकी कला को लोककला–सा सरल प्रभाव प्रदान करती है, वहीं उनकी परिष्कृत तूलिका द्वारा अंकित अनूठे संयोजनों में आधुनिक कला से जुड़े कलाकार को सूझ–बूझ के दर्शन होते हैं। देश–विदेश में अपने चित्रों की अत्यधिक मांग के कारण आपका अक्सर विदेश भ्रमण का कार्यक्रम रहता है।

वाश पेन्टिंग तथा दृश्य चित्रण आदि बहुमुखी प्रतिभा के धनी प्रो० रामअवतार जायसवाल कुछ वर्ष मेरठ रहे। अपने छोटे से मेरठ के कार्य काल में उन्होंने यहाँ के कला जगत को काफी प्रभावित किया। इसी प्रकार एक घुमक्कड़ मराठी चित्रकार श्री एम० वी० कोडरे का अक्सर मेरठ आना रहता था। पतली परतों एवं बहावदार जलरंगों के छोटे–छोटे धब्बों से छाया–प्रकाश का अद्भुत प्रभाव उनकी विशेषता थी।

विलक्षण प्रतिभा के धनी जे०पी० सिंघल (मेरठ) का झुकाव व्यावसायिक कला की ओर अधिक होने के कारण आपने विभिन्न कलैण्डरों के लिये चित्र बनाये तथा बाद में मुम्बई जाकर सिनेमा संसार का कार्य सम्हालने लगे। कलैण्डर चित्र बनाने में डा० आशा आनन्द, योगेन्द्र रस्तौगी, राजा, स्वर्गीय सेवा राम आदि अनेक कलाकारों का भी विशिष्ट स्थान रहा है। डा० आशा आनन्द के विभिन्न सामाजिक एवं धार्मिक विषयों पर बनाये गये कलैण्डर चित्र बेहद पसन्द किये गये वहीं वे आजकल नायिकाओं पर आधारित श्रृंखला का सृजन कर रही है। श्रृंखला की विशेषता है कि इसमें अंकित खजुराहों आदि की मूर्तियाँ भी सजीव होकर अंकन की ओर उन्मुख हो उठती हैं। यूरोपीय कला के यथार्थवाद से प्रभावित उनके अनेक चित्र भी प्रशंसनीय हैं।

पिछले कुछ वर्षों से मेरठ में कला क्षेत्र में एक नया जागरण दिखायी दे रहा है। परिणामस्वरूप वरिष्ठ एवं नये कलाकारों दोनों की बढ़ती हुयी रूचि के कारण कला संबंधी आयोजनों का बाहुल्य होता जा रहा है। सावित्री गैंडी की रूचि आनन्द तथा सम्पन्नता मेरे वातावरण के सामाजिक संयोजनों के निर्माण में अधिक है, वहीं डा० निर्मला के चित्रों में अवसाद झलकता है। डॉ० सविता नाग के चित्रों की विशेषता उलझाव, घुमाव, धरातलीय प्रभाव की भिन्नता तथा गतिशीलता है। डा० सुषमा राय ने पहले वॉश परम्परा में चित्र अधिक बनाये हैं किन्तु वर्तमान में तैल रंगों द्वारा आकृतिमूलक आधुनिक संयोजन कर रही हैं। डा० राका अग्रवाल एक्रेलिक माध्यम में लघुचित्रों पर आधारित संयोजन करती हैं। आपके चित्रों की विषयवस्तु प्रायः भागवत पुराण तथा अन्य पौराणिक प्रसंग होते हैं।

लेखिका (डा० नीलिमा गुप्ता) स्वयं भी लोककलाओं से विशेष रूप से प्रभावित चित्र अंकित करती हैं। उनके चित्रों में राजस्थान तथा छत्तीसगढ़ के लोक जीवन की झांकी दिखायी देती है। लोक से जुड़े विभिन्न छोटे–छोटे कथानकों को विस्तारपूर्वक चित्रित करना उन्हें भाता है, जिन्हें वे विभिन्न प्रतीकों एवं अभिप्रायों के माध्यम से अभिव्यक्त करती हैं। अमृतलाल के चित्र जहाँ एक ओर लोक संस्कृति

से प्रभावित रहे हैं वहीं 'माल संस्कृति' से जुड़ी विषय वस्तु का संयोजन भी इन्होंने उसी कुशलता के साथ किया है। प्राथमिक रंगों की चमक उनके चित्रों में अधिकांशतः दिखायी देती है। डा० मधु वाजपेयी तथा डॉ० नीतू वशिष्ठ (खतौली) के चित्रों में लघु चित्रण व लोककला का प्रभाव दर्शनीय है।

डॉ० अर्चना रानी के चित्रों में जीवन के उतार–चढ़ाव को अत्यधिक कलात्मकता के साथ प्रस्तुत किया जाता है। चटक रंगों एवं विशिष्ट धरातलीय प्रभावों के मध्य अंकित नारी की विभिन्न मनोस्थितियों का अंकन जहाँ उन्हें श्रेष्ठ कलाकार की श्रेणी में रखता है, वहीं दर्शक भी उनके चित्र देख मंत्रमुग्ध हो जाते हैं। नारी अंकन के अतिरिक्त कृष्ण से संबंधित विभिन्न कथानकों का भी उन्होंने चित्रण किया है। रेखांकन की ओर भी उनका झुकाव है। डा० अलका चड्ढा के चित्रों में अमूर्त रूपों के द्वारा जीवन के विविध भाव साकार होते हैं। पाती तथा रेल की पटरियों का अंकन जीवन यात्रा में मनुष्य के निरन्तर आगे बढ़ने तथा उसके भीतर छुपी अनेक सुख–दुख की अनुभूतियों को मन में संजोने की भावना व्यक्त करती है। अखिलेश शर्मा यद्यपि मूर्तिकला में सिद्धहस्त हैं तथापि चित्रांकन के प्रति भी उनका विशेष आकर्षण है। विविध विषयों से जुड़े उनके चित्र कला पारखियों द्वारा विशेष पसन्द किए जाते हैं।

डॉ० किरण प्रदीप के सरल रूपाकार तथा आकर्षक संयोजनों में मिश्रित माध्यम का प्रयोग एक नवीनता ला देता है। डॉ० उषा किरण तैल रंगों में शान्त तथा काव्यात्मक चित्र बनाती है। लघु चित्रों से प्रभावित आपके चित्रों का तल विभाजन विशेष आकर्षण होता है। डा० दीपशिखा के संयोजन वर्ग तथा आयतों में विभक्त सुंदर वातावरण निर्मित करते हैं। डॉ० नुपुर नेहरू ने महापुरुषों तथा जीवन के विविध पहलुओं का सजीव अंकन किया है। डा० राजेन्द्र राजन के चित्रों में धरातलीय प्रभावों का प्रयोग उनके चित्रों को भिन्न स्थान प्रदान करने में सहायक है। प्रकृति के रहस्यात्मक प्रभावों को उजागर करने के लिये वे अमूर्त रूपों का चयन करते हैं।

डॉ० लाल रत्नाकर (गाजियाबाद) के चित्र पाश्चात्य प्रभाव से मुक्त ग्रामीण भारत की आकर्षक झांकी दिखाते हैं। उनके चित्रों की प्रभावात्मक रेखाएं और आकर्षक रंग योजना संपूर्ण वातावरण में महक भर देती है। बनारस के 'लोक' से प्रभावित जीवन के संघर्षों से जूझते आशावान व्यक्तियों का चित्रण उन्हें पसन्द है। खुशीराम (गाजियाबाद) के दृश्य चित्रों में गहरे अवसाद भरे वातावरण के मध्य फूटता प्रकाश जीवन के अंधकार में सुख के आगमन का द्योतक है। रामबली प्रजापति (गाजियाबाद) के चित्रों में ग्रामीण वातावरण में आकर्षक आकृतियों का अंकन है। विनोद जैन (गाजियाबाद) के चित्र सामाजिक विषयों पर आधारित हैं।

जगदीश वर्मा (मुजफ्फरनगर) ने ताश तकनीक में रंगों की क्रमिक गहराई तथा सुनियोजित अन्तराल विभाजन द्वारा चित्र सृजन किए हैं। राजस्थानी लघु चित्र शैली पर आधरित संयोजनों को नये रूपों में सजाया है। बलबीर (बागपत) को रेखांकन तथा तैल माध्यम दोनों में महारथ प्राप्त है। जीवन की क्रूर व कठोर वास्तविकता से आपके चित्र दर्शकों का साक्षात्कार कराते हैं।

स्वतन्त्र चित्रकार श्री सिंह कुक्कल (नोएडा) की कला प्राचीन परम्पराओं की आकर्षक झलक दिखाती है। मूर्तिकला का प्रभावोत्पादक चित्रण उनकी विशेषता है। माधुरी माथुर (मेरठ) विज्ञान के नवीन चमत्कारों को अपनी कला में स्थान देते हैं। श्री मलय डे जलरंग के कुशल चित्रकार हैं।

मेरठ परिक्षेत्र में महाविद्यालयों तथा विश्वविद्यालय परिसर में कला संबंधी उच्च शिक्षा दिए जाने के अतिरिक्त अनेक निजी कला केन्द्रों में भी कला विद्यार्थी अभ्यासरत् हैं। पिछले काफी वर्षों तक चमन सिंह इसी प्रकार का प्रशिक्षण कार्य कराते रहे। आज जनरूचि से जुड़े उनके अनेक चित्रों के विषय धर्म, संस्कृति तथा ग्रामीण जीवन से संबंधित हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि मेरठ परिक्षेत्र जहाँ प्राचीन समय में कला के दृष्टिकोण से धनी रहा है वहीं आज भी यहां कला की धारा अजस्त्र रूप से बह रही है। यह क्षेत्र सदैव ही चित्रकला के ज्ञान व रूचि से सम्पन्न रहा है और भविष्य में कला की विभिन्न विधाऐं यहाँ चहुँमुखी विकास की ओर अग्रसर रहेंगी, ऐसी आशा है।

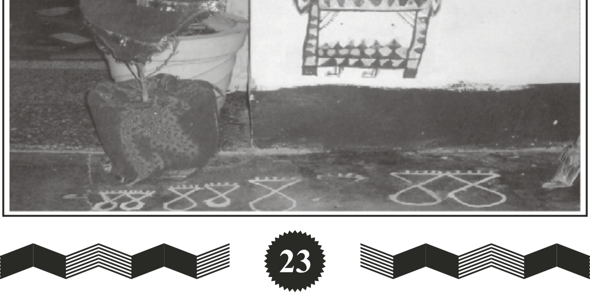

भारतीय समकालीन कला में चौ. चरण सिंह विश्वविद्यालय मेरठ का योगदान

कला इतिहास और वर्तमान कला का सामंजस्य बैठाना आसान भी है और उतना ही जटिल भी यदि कला को समझने का प्रयास किया जाय तो अनेक प्रकार के विवाद घर करने लगते हैं, अतः इन विवादों से अलग एक चर्चा आज की कला की दशा पर। मेरठ विश्वविद्यालय की स्थापना के साथ विरासत में यह विषय मिला तब जिन महाविद्यालयों में चित्रकला के अध्ययन की सुविधा थी उनमें गाजियाबाद का एम.एम.एच. कालेज और मेरठ में मेरठ कालेज।

यहां के कला इतिहास का महत्वपूर्ण वर्ष 1960 जिसमें डॉ.सी.एल.झा ने इस विषय के स्थापना का संकल्प लिया जिसकी वजह से इस क्षेत्र में उनको इस विषय के संस्थापक के रूप में याद किया जाता है, जो उन दिनों एम.एम.एच. कालेज गाजियाबाद में कार्यरत थे उस समय लगभग पूरे प्रदेश में संचालित कालेज आगरा विश्वविद्यालय से सम्बद्ध थे।

समकालीन कला का स्वरूप समझने के लिये मानदण्ड तय करना यद्यपि इतना आसान नहीं है जितना कलात्मक स्वरूप आज की समकालीन कला में नजर आता है उनके अर्थ उतने गूढ़ नहीं लगते। उनको सरलतम करने में जिनको सबसे ज्यादा महत्व मिलना चाहिये वह हैं एन. के. जैन जो एम.एम.एच.कालेज गाजियाबाद में कुछ दिनों काम करने के उपरान्त जर्मनी चले गये थे और वहीं बस गये।

दूसरी ओर विश्वविद्यालय पाठ्यक्रम और उसका संचालन एक बड़ा कारण बनता है, जहां एक ओर विभिन्न व्यावसायिक पाठ्यक्रम नित नवीन तकनीक को धारणकर अपने विषय को समकालीन धाराओं के निकट रखते हैं ऐसे समय में यहां कहीं न कहीं चूक हो रही है जिसके कारण कलाओं के परिदृश्य कुछ अलग थलग पड़े हुए हैं। यह कहना तथ्यों को साफ करने में सहयोग करेगा कि इस विषय की अपनी आवश्यकताएं हैं जिनकी अनदेखी हुई है यथा समय का संकट पाठ्यक्रम की विसंगतियां और मौलिकता की बजाय अनुकृति की परम्परा का विस्तार हुआ है। यहीं पर यह भी ध्यान देने की बात है कि लम्बे अन्तराल के उपरान्त भी यहां के कला संसार ने उस गति से अपनी पहचान बनाने में पीछे रहा है। यदि कुछ भी प्रतिस्पर्धात्मकता तय की गयी होती तो ऐसा न होता, इसके लिए वक्त रहते प्रयास की महती आवश्यकता है अन्यथा हम और पिछड़ते जाएंगे।

हमारी प्रतिबद्धताएं आने वाली पीढ़ी को समृद्ध सजग व मौलिक बनाने की होनी चाहिये न कि अंधअनुकरणीय फौज खड़ी करने की यही कारण है कि आज हम रचनाकार न बनाकर एक बड़ी बेरोजगार फौज खड़ी कर रहे हैं जिनके पास डिग्री तो अच्छे अंको की होती है पर रचनात्मकता नदारद। कुछ कलागुरू क्षमा करेंगे जिन्होंने इस बड़े एवं महत्वपूर्ण विषय को अपने कद से उपर ले ही नहीं जाने दिया। यहां इतने पी–एच.डी. धारक मिल जाएंगे जितने शायद और कहीं नहीं। यदि हम इस यथार्थ से बचने कि ही निरन्तर कोशिश करते रहे तो हम बड़ी से बड़ी डिग्री तो देते रहेंगे लेकिन उन्हें कलाकार नहीं बना पायेंगे।

परन्तु समय–समय पर इससे हटकर भी अलग तरह के प्रयास हुए हैं जिनमें राष्ट्रीय स्तर की कार्यशलाएं, प्रदर्शनियां–नोएडा,गाजियाबाद मेरठ,मुजफ्फरनगर एवं सहारनपुर में समय–समय पर आयोजित हुए हैं। इसी दिशा में एक कदम आगे बढ़कर 2007 में चौ.चरण सिंह विश्वविद्यालय मेरठ परिसर में विश्वविद्यालय इतिहास में पहली चित्रकला कार्यशाला का आयोजन हुआ जिसमें विविध महाविद्यालयों के वर्किंग आर्टिस्ट एवं प्रतिभासंपन्न छात्र छात्राओं ने सहभागिता की इन्हीं चित्रों की एक प्रदर्शनी हिन्दी विभाग के हाल में आयोजित हुई इसका असर विश्वविद्यालय आने वाले हर उस व्यक्ति पर हुआ जिसमें कलाअभिरूचि थी।

इसी तरह के प्रयास मेरठ, नोएडा, गाजियाबाद व सहारनपुर में राज्य ललित कला अकादमी लखनउ द्वारा आयोजित क्षेत्रिय कला प्रदर्शनी का आयोजन होने पर हुआ। इन प्रदर्शनियों के आयोजनों में कलादीर्घा की महत्वपूर्ण भूमिका होती है, जिसके लिए पश्चिमी उत्तर प्रदेश में इसकी स्थापना तत्कालीन प्रशासन व कलाकारों के प्रयास से गा.वि.प्रा.द्वारा कलाधाम के रूप में गाजियाबाद में हुआ। यद्यपि इन दिनों भारतीय कला पूरी दुनिया में कुछ खास तरह से लोकप्रिय हो रही है जिसमें हमारी हिस्सेदारी और जिम्मेदारी दोनों इसलिये भी महत्वपूर्ण हो जाती है कि समकालीन कला सन्दर्भ का दायित्वबोध विश्वविद्यालय एवं इससे सम्बद्ध महाविद्यालयों पर जाता है जहां कला की उच्च शिक्षा दी जा रही है। वहां पाठ्यक्रम और समय के संकट ने सारी प्रतिभाओं को अवसर विहिन कर दिया है दूसरी ओर कला की एक शाखा जो कला की उस प्रवृत्ति की समर्थक है जिसे करते हुए कला छात्र की रूचि मरने लगती है जिसे लगभग हर जगह देखा और महसूस किया जा सकता है जिसे हम इस प्रकार भी देख पाते हैं कि जिस अनुपात में हमारे कला विद्यार्थियों को आगे आना चाहिए था वह संख्या अनुपात में ठीक नहीं है, इसके लिये प्रयास होना चाहिए जिसमें कला की आज के दौर में प्रासांगिकता पर विचार व मौजूदा पाठ्यक्रम में बदलाव महत्वपूर्ण स्थान रखता है। फिर भी कुछ कर्मठ एवं कार्यशील रचनाकारों ने अपनी रचनात्मकता को जीवित रखा है।

दर्जनों महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालय परिसर में कला शिक्षण हो रहा है परन्तु कोई कलादीर्घा न होने के कारण कलाकारों एवं नवोदित कलाकारों को अपने चित्रों को प्रदर्शित करने का उपयुक्त अवसर नहीं मिल पा रहा है, ऐसे में विश्वविद्यालय प्रशासन जहां साहित्यिक गतिविधिओं को बढ़ावा दे रहा है उसी दिशा में सांस्कृतिक केन्द्र की आवश्यकता भी महसूस हो रही है ऐसे समय में कलादीर्घा का निर्माण अति प्रासांगिक हो जाता है। जिससे समकालीन कला का स्वरूप दिखाई दे, यद्यपि कई कलाकारों ने इस दिशा में राष्ट्रीय और अर्न्तराष्ट्रीय स्तर पर इस विश्वविद्यालय की उपस्थिति दर्ज करायी है, उनकी मौलिकता एवं रचनात्मकता क्षेत्र, प्रदेश, देश और भारतीय कला के तत्वों से ओत प्रोत सन्देश अर्न्तराष्ट्रीय स्तर पर पहुंचाने में सफल हो रही हैं। इन्हीं सन्देशों को लोगों तक पहुंचाने के लिये कलात्मक गतिविधियां बढ़ानी होंगी जिससे इस विश्वविद्यालय का कला प्रभाव और व्यापक होगा।

पश्चिमी उत्तर प्रदेश के संगीत घराने

संगीत प्रेमी जानते हैं कि भारतीय संगीत में घराने का अर्थ परिवार या कुटुम्ब नहीं वरन् वह विशिष्ट संगीत शैली है जो उसे दूसरी प्रचलित शैलियों से अलग करती है। ये घराने या तो उन स्थानों से जाने जाते हैं जहाँ उनका जन्म हआ या उन गुरुओं, उस्तादों के नाम से प्रचलित होते हैं, जिन्होंने इन्हें विकसित किया। इन्हीं संगीत घरानों (Schools) में से एक घराना है 'किराना' घराना। इस घराने से सम्बन्ध रखने वाले कई कलाकारों तक को यह पता नहीं कि 'किराना' का सम्बन्ध किस स्थान से है।

किराना घराना :–

हमें जानकर आश्चर्य होगा कि 'किराना' वास्तव में कैराना है जो कि पश्चिमी उत्तर–प्रदेश के मुजफ्फरनगर जिले का एक कस्बा है। जहाँ पैदा हुए उस्ताद अब्दुल करीम खाँ (नव० 11,1872) ने इस घराने की नींव रखी। उस्ताद करीम खाँ साहब एक ऐसे संगीतकार हुए जिन्होंने 'हिन्दुस्तानी' शास्त्रीय संगीत की एक ऐसी शैली विकसित की जिसे इस वर्ष भारत के सर्वोच्च सम्मान 'भारत रत्न' से सम्मानित किया गया। ज्ञातव्य है कि पं० भीमसेन जोशी 'किराना' घराने की गायकी परम्परा के ही यशस्वी कलाकार हैं जिन्हें 2009 का 'भारत रत्न' प्रदान किया गया। डॉ० अब्दुल करीम खाँ के शिष्य सवाई गंधर्व ही भीमसेन के गुरु हैं।

उस्ताद करीम खाँ साहब के समय में यदि 'भारत रत्न' का पुरस्कार होता तो निश्चित ही वे इसके सबसे पहले हकदार होते क्योंकि 'हिन्दुस्तानी' शास्त्रीय संगीत को जो दिशा इन्होंने प्रदान की वह शायद ही दूसरा कोई संगीतकार प्रदान कर पाया होगा। उनकी ख्याति सारे हिन्दुस्तान में फैल चुकी थी। अपने शुरुआती दिनों में ही 'बड़ौदा' के राजदरबार में बतौर संगीत को प्रतिष्ठित किया गया। उनकी गायकी पर मुग्ध हुई राजपरिवार की ताराबाईमाने से विवाह करने हेतु उन्हें बाद में दरबार भी छोड़ना पड़ा था किन्तु 'मैसूर' के दरबार में उन्हें प्रतिष्ठा मिल गयी तथा साथ ही 'संगीत रत्न' के ख़िताब से सम्मानित भी किया गया।

'मैसूर' दरबार में रहते हुए ही उनके संगीत का दायरा बढ़ा। गुणीजन जानते हैं कि भारतवर्ष में दो प्रकार के शास्त्रीय संगीत हैं–उत्तर भारत के शास्त्रीय संगीत को कर्नाटक संगीत कहते हैं। ये दोनों प्रकार अपने–अपने क्षेत्र तक सीमित रहे किन्तु उस्ताद अब्दुल करीम खाँ साहब ने न केवल 'कर्नाटक' संगीत को प्रभावित किया बल्कि स्वयं भी उससे प्रभावित हुए। संभवतः उत्तर भारत के वह पहले संगीतकार हैं जिन्हें दक्षिण भारत में संगीत समारोहों में आमन्त्रित किया गया। उनकी मृत्यु भी 1937 में दक्षिण भारत की संगीत यात्रा से लौटते समय हुई। मैसूर दरबार में आते–जाते उन्होंने बीसवीं सदी के दो दिग्गज संगीतकारों पं० सवाई गंधर्व (पं भीमसेन जोशी के गुरु) व केसरबाई केरकर जैसे शिष्य पैदा किए।

एक गुरु के रूप में भी उन्हें जो ख्याति मिली वह भी विरले ही लोगों को मिल पाती है। वर्ष 1913 में पूना में 'आर्य संगीत विद्यालय' की स्थापना कर उन्होंने जिस समर्पण व खुले मन से संगीत शिक्षा देनी शुरू की वैसी उस समय के उस्तादों में प्रचलित नहीं थी। उनकी इस लोकप्रियता का प्रभाव ही है कि महाराष्ट्र में 'हिन्दुस्तानी' शास्त्रीय संगीत प्रायः हर कोई संगीतकर 'किराना' घराना की ही दुहाई देता है। मिरज में 1937 तक निवास करने वाले करीम खाँ साहब की स्मृति में हर वर्ष अगस्त माह में संगीत समारोह आज भी आयोजित किए जाते हैं किन्तु पश्चिमी उत्तर–प्रदेश जो उनकी जन्म स्थली रही है उन्हें भूले बिसरे भी याद नहीं करती। उनके द्वारा स्थापित संगीत परम्परा की रोशनी में हीराबाई बड़ोदकर (पुत्री), सुरेश बाबू माने (पुत्र), संवाई गंधर्व, गंगूबाई हंगल, पं० भीमसेन जोशी, पं० छन्नू लाल मिश्र, प्रभा आत्रे जैसे अनेक कलाकार संगीत जगत के नक्षत्र बन चुके हैं।

उस्ताद अब्दुल करीम खाँ साहब ने कर्नाटक शैली से प्रभावित होकर 'खयाल' गायकी को एक विशिष्टता प्रदान की तो दूसरी ओर 'ठुमरी' गायकी को 'पूरब' और 'पंजाबी' अंग से हटकर एक अलग पहचान दी। वह प्रथम 'हिन्दुस्तानी' संगीतकार थे जिन्होंने 'कर्नाटक' संगीत का गहन अध्ययन किया तथा 'कर्नाटक' के राग 'आभोगी' को 'हिन्दुस्तानी' संगीत में प्रतिष्ठित किया। 'कर्नाटक' के अतिरिक्त उन्होंने ग्वालियर घराने के रहमत खाँ से 'भैरवी' प्रस्तुत करने का अन्दाज ग्रहण किया। वास्तव में उस्ताद करीम खाँ एक ऐसे सच्चे संगीतकार हुए हैं जिन्होनें संगीत के प्रति कोई पूर्वाग्रह नहीं रखा, जहाँ भी सौन्दर्य देखा उसे अपनी गायिकी में आत्मसात कर लिया।

पश्चिमी उत्तर प्रदेश के कैराना में जन्में इस महान् कलाकार ने अपने पिता काले खाँ व चाचा अब्दुल्ला खाँ से संगीत की रोशनी लेकर सारे संगीत जगत् को रोशन किया। उनके ही चचेरे भाई (साले भी) उस्ताद वहीद खाँ कैराना घराने की दूसरी महान् शाख्सियत हुए हैं। इस घराने के ऋणी लोकप्रिय कलाकारों में बेगम अख्तर व मौ० रफी भी शामिल हैं।

अजराड़ा घराना :–

तबला ऐसा वाद्य है, जिससे शायद ही कोई अपरिचित हो। उत्तर भारत में तबले के बिना संगीत की कल्पना ही नहीं की जा सकती। पखावज के दो खण्ड करके बना यह वाद्य इतना लोकप्रिय हुआ कि इसने पखावज को ही हाशिए पर कर दिया। ध्रुपद को छोड़कर पखावज कही सुनाई ही नहीं देता। उत्तर भारत में ताल वाद्य से जुड़ी सारी प्रतिभाएं जैसे तबले पर मेहरबान हो गई हों। शैलियों की विशिष्टता के आधार पर 'घराने' विकसित हुए। तबला वादन के 6 घरानों में दिल्ली, अजराड़ा, लखनऊ, फर्रुखाबाद, बनारस तथा पंजाबी घरानों ने गुदई महाराज, अल्लारक्खा, जाकिर हुसैन, चतुरलाल, किशन महाराज जैसी प्रतिभाएं दी हैं। बीसवीं सदी के मध्य में फर्रुखाबाद घराने के अहमद जान थिरकवा व अजराड़ा घराने के हबीबुद्दीन खाँ ने तबला वादन को नई बुलन्दियाँ प्रदान की।

अजराड़ा घराने की शैली में तबला वादन करने वाले कलाकार आज देश भर में मौजूद हैं किन्तु 'अजराड़ा' घराने का नामकरण मेरठ के एक छोटे से गाँव अजराड़ा के आधार पर हुआ, इससे मेरठवासी ही नहीं पश्चिमी उत्तर प्रदेश के अधिकतर लोग अनभिज्ञ होंगे। इस गाँव ने संगीत जगत को एक से एक सारंगी वादक व तबला वादक दिये हैं। इस गाँव तथा घराने के उस्ताद अकरम खाँ वर्तमान पीढ़ी में देश के सर्वश्रेष्ठ तबला वादकों में गिने जाते हैं। अभी हाल ही में 29 जनवरी से 3 फरवरी के बीच मेरठ, मुजफ्फरनगर, सहारनपुर, रुडकी, देहरादून एवं ऋषिकेश में उन्होंने कार्यक्रम प्रस्तुत किए। श्रोताओं में शायद ही किसी को पता होगा कि देश की यह अद्भुत प्रतिभा इसी अंचल की देन है। इसे विरला संयोग ही कहेंगे कि मेरठ व मुजफ्फरनगर की दर्शकदीर्घा में 'अजराड़ा' घराने का एक विख्यात कलाकार भी उपस्थित था। अकरम खाँ के तबला वादन को सुनकर उनके मुख पर जो भाव दिखे उससे लगा कि वह अजराड़ा घराने के भविष्य के बारे में पूर्णतः आश्वस्त है। यह वरिष्ठ तबला वादक कोई और नहीं अकरम खाँ के पिता व गुरु उस्ताद हशमत अली खाँ ही थे। नायाब कायदों के लिए प्रसिद्ध अजराड़ा घराने के इस गुरु के पास अपने शिष्यों को देने के लिए अभी बहुत कुछ शेष है। देश के सभी दिग्गजों स्व० उस्ताद विलायत खाँ, पं० रविशंकर, पं० हरिप्रसाद चौरसिया, पं० जसराज, पं० शिवकुमार शर्मा, अजमद अली खॉ आदि को संगत दे चुके अकरम खाँ स्वीकारते है कि उनके गुरु के पास ज्ञान का अकूत खज़ाना है।

चौ० चरण सिंह विश्वविद्यालय के लिए गर्व का विषय है कि अकरम खाँ, जिन्हें भारत के राष्ट्रपति स्व० आर० वेंकटरमन व डा० ए०पी०जे० अब्दुल कलाम सम्मानित कर चुके हैं तथा जिनकी प्रतिभा को सारा सम्बन्धित जगत नमन करता है, वह इसी विश्वविद्यालय के विद्यार्थी रह चुके हैं। अकरम खाँ ने वर्ष 1986 में मेरठ कॉलिज से बी.कॉम. की परीक्षा पास की है। पश्चिमी उत्तर प्रदेश की यह प्रतिभा न सिर्फ देश–विदेश के संगीत प्रेमियों को अपनी कला से आहलादित कर रही है वरन् अजराड़ा घराने की विरासत को सुरक्षित हाथों में सौंपने हेतु नई पौध भी तैयार कर रही हैं। उनके शिष्यों में हफीज अहमद अल्वी, एन.अक्षय (अमेरिका) के अलावा उनके 5 वर्षीय पुत्र जरगाम खॉ भी हैं। उनके बड़े भाई सरोद वादक दानिश असलम के पुत्र रुमान खाँ भी घराने की विरासत संभालने में लीन है। पश्चिमी उत्तर प्रदेश की इन विभूतियों को शत्–शत् नमन्!

मेरठ जनपद और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि

मेरठ भावात्मक एकता, साम्प्रदायिक एकता एवं सद्भावना का अनुपम उदाहरण है। मेरठ के सांगीतिक विकास की प्रक्रिया में सभी धर्मो की अपनी महत्वपूर्ण भागीदारी रही है। मेरठ जनपद लम्बे समय से सावंगीतिक क्षेत्र के अनेक घराने, चाहे वह गायन से संबंधित हो या वादन से, का जन्मदाता रहा है। मेरठ की सांगीतिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि काफी समृद्ध रही है। अनेक प्रतिष्ठित राष्ट्रीय–अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त संगीतज्ञ एवं मनोरंजन की दुनिया से जुडीं अनेकों फिल्मी हस्तियों ने मेरठ के गौरव को बढाया है। अजराड़ा घराना मेरठ की ही देन है। ख्याति प्राप्त तबला वादक स्वर्गीय उस्ताद हबीबुद्दीन खाँ साहब इस घराने के शीर्षस्थ कलाकार हुए हैं उनके तबला वादन की प्रतिभा एवं मौलिकता पर मेरठ आज भी नाज़ करता है। उनके सुपुत्र उस्ताद मलू खाँ एवं शिष्य उस्ताद रहमत उल्ला खाँ जो आकाशवाणी के बुजुर्ग स्टाफ कलाकार हैं। उनके सुपुत्र उस्ताद अकरम खाँ ने इस परम्परा को आगे बढ़ाया है। उस्ताद हशमत खाँ तबला वादन अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पहचान बना चुका है। मेरठ घराने के ही उस्ताद निसार हुसैन खाँ रामपुर आकाशवाणी पर कार्यरत हैं और तबला वादन में एक पहचान बनाए हुए हैं। दिल्ली दूरदर्शन पर उस्ताद बल्लू वारसी भी मेरठ की देन हैं। इसी तरह अनेकों तबला वादक जो अजराड़ा घराने से शिक्षा ग्रहण कर चुके हैं, एक तरह से मेरठ की ही देन है।

सुषिर वादन की बात करें, तो मेरठ के मशहूर शहनाई वादक स्वर्गीय श्री जगन्नाथ जी पदमश्री से विभूषित थे, अपने शहनाई वादन से इन्होंने दूर–दूर तक मेरठ के नाम को रोशन किया। आज भी उनके परिवार में श्री विश्वनाथ एवं श्री केदार नाथ इस परम्परा को आगे बढ़ाए हुए हैं। विश्वनाथ जी शहनाई के साथ–साथ एक उत्कृष्ट शास्त्रीय गायक भी हैं एवं आकाशवाणी दिल्ली में प्रोड्यूसर हैं। श्री केदारनाथ आकाशवाणी दिल्ली में तबला वादक भी हैं। किराना घराना जो शास्त्रीय गायन में सिरमौर घराना है, उसका उद्गम भी मेरठ जनपद से है। किराना घराने के पूर्वज एवं उस्ताद अब्दुल वहीद खाँ का मेरठ से खानदानी सम्पर्क रहा है।

मेरठ में शास्त्रीय संगीत पल्लवित एवं पुष्पित करने वालों में स्वर्गीय श्री प्रेमप्रकाश जौहरी किराना घराने की शिष्य परम्परा में रहे थे। आप रघुनाथ गर्ल्स कॉलेज, मेरठ में संगीत के वरिष्ठ शिक्षक थे। आपने अनेकों प्रयोगात्मक पुस्तकें लिखी। आपके अनेकों शिष्य एवं पुत्र श्री राकेश जौहरी इस क्षेत्र में कार्यरत हैं एवं संगीत के प्रचार–प्रसार के लिए कार्य कर चुके हैं। मनोरंजन यानि सिनेजगत में भी मेरठ की अनेकों प्रतिभाऐं जगमगा रही हैं। संगीत निर्देशक एवं फिल्म निर्देशक श्री विशाल भारद्वाज (ओंकारा फेम) मेरठ की ही देन है। सूफी गायक कैलाश खैर मेरठ जनपद के एक गाँव से संबद्ध हैं। मेरठ में संगीत के प्रचार–प्रसार एवं शिक्षण के लिए अनेकों संस्थाएं कार्यरत हैं। 1970 से मेरठ म्यूज़िक सर्किल नामक संस्था ने राष्ट्रीय–अन्तर्राष्ट्रीय सभी स्तर के कलाकारों को मंच प्रदान किया। 1997 से सरगम मन्दिर, मेरठ संगीत के उत्थान के लिए कार्य कर रही हैं। अनेकों प्रतिष्ठित संगीतज्ञ, नृत्यागंनाऐं अपने कार्यक्रम प्रस्तुत करते रहते हैं और मेरठ की जनता को शास्त्रीय संगीत के प्रति रसमय रखते हैं। संगीत समाज, संगीतभारती, शिवागी संगीत महाविद्यालय, भातखण्डे संगीत विद्यालय, सुर संगम आदि संस्थाएं संगीत शिक्षण के कार्य में सहयोग कर रही हैं। इसके अतिरिक्त स्नातक एवं स्नात्तकोतर स्तर पर भी महाविद्यालयों में शास्त्रीय संगीत की शिक्षा उच्च स्तर पर दी जाती है।

मेरठ में संगीत के कद्रदानों की कमी नहीं है। मेरठ से हमेशा अच्छे एवं प्रतिष्ठित कलाकारों ने पहचान बनाई है और आगे भी बनाते रहेंगे।

विज्ञान एवं संस्कृति

"विज्ञान एवं संस्कृति" विषय ही अनेक रोचक प्रश्नों का समुद्र प्रतीत होता है। जिस संस्कृति की घुट्टी पीकर हम बड़े हुए हैं, जो हमारे आचार – विचार, व्यवहार का अंग बन चुकी है, उसका विज्ञान से क्या सरोकार है? यदि है भी तो संस्कृति को हमारी सभ्यता ने विकास पथ पर पहले चुना या विज्ञान को ? अर्थात् संस्कृति वैज्ञानिक तथ्यों पर आधारित है या विज्ञान संस्कृति–जन्य प्रश्नों के समाधान पर ? इन दोनों का अस्तित्व स्वतन्त्र है अथवा एक दूसरे में सन्निहित ?

एक दृष्टि मानव समाज के इन अभिन्न रचनात्मक अंगों पर डालें तो प्रतीत होगा कि एक देह है और दूसरा प्राण। एक के बिना दूसरा अपूर्ण है।

संस्कृति को परिभाषित करें तो वह जीवन जीने की परिष्कृत शैली, व्यक्तित्व को प्रभावित करने वाली, व्यक्तित्व का निर्माण करने वाली सामान्य ज्ञान की वह शाखा है जो परम्परा के रूप में अबाध गति से मानव समाज की श्रृंखला को बूंद से बूंद की भांति नदी की धारा में संजोकर विश्व समुद्र में प्रवाहित करती है। मानव सभ्यता का विकास संस्कृति के विकास की कथा कहता है। देशज रूप में, अनेक आचार, विचार, व्यवहार के रूप में, मानव समाज को एक सूत्र में पिरोकर उत्कर्ष के मार्ग पर प्रवृत्त करने वाली इकाई ही संस्कृति है। विश्व भर में महाद्वीपीय, उपमहाद्वीपीय से लेकर संस्कृति की विविधता क्षेत्र, जाति, धर्म अथवा समुदाय विशेष के स्तर तक दिखाई देती है। हर संस्कृति में भिन्न–भिन्न प्रकार के संस्कारों का उल्लेख मानव जीवन के भिन्न–भिन्न आयामों से जुड़ा मिलता है– यथा नामकरण, उपनयन, विवाह, अन्त्येष्टि आदि षोडश संस्कार हिंदू धर्म की मान्यता के अनुरूप हैं, खतना, निकाह आदि इस्लाम की मान्यता के अनुसार, बैप्टिज़्म ईसाई धर्म की मान्यता के अनुसार है। क्या इनसे ये प्रतीत नहीं होता कि सभी धर्मों में प्रकारान्तर से, मनुष्य के जन्म से मृत्यु तक जीवन को शारीरिक–मानसिक विकास के कुछ पड़ावों को दृष्टिगत रख सामाजिक स्वरूप दिया गया है?

कथन है – "जन्मना जायते शूद्रः, संस्कारात् द्विजोच्यते" जिसका भाव है, संस्कार ही मनुष्यत्व प्रदान करते हैं, उनके बिना वह पशु के समान है।

हर व्यक्ति को शैशव काल से ही संस्कारों द्वारा सिंचित कर सभ्य समाज की इकाई के रूप में गढा जाता है। कच्ची माटी को संस्कारों के सांचे में ढाल कर सभ्यता से श्रृंगार कर किसी समाज का प्रतिनिधि बना दिया जाता है। इन सभी अवसरों को वर्णित करते अनेक लोकगीत हर भाषा में हैं परन्तु किसी भी गीत में संस्कार की किसी भी पद्धति का वैज्ञानिक विवेचन नहीं मिलता। तो विज्ञान का संस्कृति से कैसा संबन्ध है?

संस्कृति के प्रचार, प्रसार के माध्यम अनुश्रुतियाँ, पौराणिक ग्रन्थ, धार्मिक ग्रन्थ, काव्य, गीत, नृत्य, चित्रकला, शिल्प, देशाटन आदि हैं। आज के युग में तो दूरसंचार, दूरदर्शन के अनेक चैनल, दैनिक व साप्ताहिक पत्र, पत्रिकाएं उपलब्ध हैं। हर संस्कृति की विशेषताएं व अप्रासंगिक कुरीतियाँ भी सरलतापूर्वक सामान्य व्यक्ति के ज्ञानार्थ उपलब्ध हैं।

विज्ञान को परिभाषित करें तो वह ज्ञान का तर्कसिद्ध व प्रामाणिक रूप ही कहा जाएगा। यह देशकाल के बन्धनों से मुक्त, तथ्यपरक ज्ञान है जिसकी प्रकृति में अनेको प्रश्नों के समीचीन समाधान खोजना व परखना निहित है।

वैज्ञानिक सोच हर संस्कृति की ग्रहण करने योग्य विशेषताओं को अपनी संस्कृति में समाहित करने का मार्ग प्रशस्त करती है। संस्कृति विज्ञान के विकास के लिए भी चुनौतियाँ प्रस्तुत करती है, जिससे नवीन आविष्कारों की पृष्ठभूमि का निर्माण होता है। उदाहरण के लिये उन्नीसवीं सदी तक चूल्हे पर ही भोजन बनाने की प्रथा थी, क्योंकि वही उपलब्ध साधन था। हमारी संस्कृति में चूल्हा लीपना, पोतना, पूजना, उसी के अनुरूप पात्रों का प्रयोग करना, आदि रहे। उस काल के सभी गीतों, अनुष्ठानों व साहित्य में भोज्य पदार्थों के निर्माण का विस्तृत वर्णन है, जो वैज्ञानिक दृष्टि से उस काल में उपलब्ध संसाधनों के उचित उपयोग की ही वकालत करता है। तात्पर्य यह है कि संस्कृति में व्याप्त व्यवहार तथा विचार उस काल के लिये वैज्ञानिक सम्मतसिद्ध थे। नक्षत्र विज्ञान आज भी उन गणनाओं व विवेचनाओं को सही पाता है जो अब से सहस्त्रों वर्ष पूर्व की गई थीं। मनुष्य की प्रकृति प्रयोगधर्मी रही है। इसी कारण मनुष्य ने सभ्यता के विकास में प्रयोगों व साक्ष्यों पर आधारित ज्ञान को संस्कृति के रूप में प्रचलित किया। आयुर्वेद में वर्णित औषधीय पादपों से औषध रसायन निष्कर्षण की विधि व अनुप्रयोग क्या विज्ञानसम्मत नहीं है? हमारी संस्कृति का उत्तरोत्तर विकास देशकाल, परिस्थितियों की आवश्यकतानुसार तर्कसम्मत विज्ञानपरक रूप से हुआ। हम कुछ रीतियों को जो पूर्व काल में संसाधनों की सीमितता के अनुसार उचित

थी, बिना वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाए उसी रूप में स्वीकार करें तो यह बुद्धि तथा विवेकहीनता से उपजी सामाजिक विडम्बना ही होगी।

हमारे देश में अतिथि आगमन पर प्रणाम कर, चरण प्रक्षालन कर, आसन देना शिष्टाचार था, तो अमरीका व ब्रिटेन में हाथ मिलाकर अभिवादन करना। तार्किक रूप से देखें तो भारत में बाहर से आने पर उस काल में धूल–धूसरित पैरों को शीतल जल से आराम मिल जाता होगा, ठंडे देश में न धूल अधिक उड़ती है, न ही पैर धोना भला लगेगा। इसी प्रकार परिधान, वेशभूषा आदि भी आवश्यकतानुसार भिन्न–भिन्न हैं। हमारी संस्कृति हमें पशु–पक्षियों आदि सम्पूर्ण प्रकृति से प्रेम करना सिखाती है, विज्ञान हमें इस प्रेम के सार्थक परिणाम बताता है। एक वृहत् पारिस्थितिक तन्त्र के रूप में पृथ्वी पर जीवन सह–अस्तित्व के कारण है। सहिष्णुता का पाठ भी बचपन से ही पढ़ाया जाता है। यही कारण है कि भारत में संस्कृति का जीवन में निर्वाह करने वाले लोग छोटी–छोटी बातों को लेकर लोग तनावग्रस्त नहीं होते। विज्ञान भी तनावरहित रहने को स्वास्थ्य के लिये उचित बताता है।

हमारी संस्कृति प्राकृतिक वस्तुओं के उपयोग द्वारा शरीर को कान्तिवान, स्वस्थ एवं सुन्दर बनाने के साधन बताती है, जो विज्ञान आज स्वीकार करता है। हमारी संस्कृति में स्वच्छता का विशेष स्थान है, यहाँ तक कि दिनचर्या के नियम हैं, जो आज विज्ञान सम्मत हैं।

विज्ञान शरीर है तो संस्कृति, जीवन का स्पन्दन। विज्ञान की सार्थकता संस्कृति की लय को, उसकी प्रमाणिकता को पहचानने में है। यहाँ यह कहना भी प्रासंगिक होगा कि संस्कृति का कलेवर देश, काल, वातावरण से प्रभावित होता है, वह तर्कों की कसौटी पर नहीं कसा जाता। अतः देश, काल की आवश्यकतानुसार वैज्ञानिक सूझ–बूझ के साथ, संस्कृति को नया आयाम देना भी मानव सभ्यता के उत्कर्ष का सोपान होगा, जिस संस्कृति का मानव सभ्यता के साथ अनन्य संबंध है वह भला तर्कहीन कैसे ही सकती है? आवश्यकता है यह समझने की, कि क्या वे कारण, जिन्होंने संस्कृति के किसी पक्ष को जन्म दिया, प्रासंगिक हैं? क्या उनका उसी रूप में निर्वाह करना, परम्परा को परिवर्तित न करना उचित है? यदि तथ्यों की अनदेखी कर तर्क दिये जायें, तो निश्चित रूप से हम पूर्वाग्रह–ग्रसित ही हैं। हमारी संस्कृति हमारे वैज्ञानिक उत्कर्ष की थाती है। हम संस्कृति के गूढ़ रहस्यों का उपयोग विज्ञान के नये आयाम विकसित करने में व विज्ञान का सम्यक् उपयोग संस्कृति के संरक्षण में कर, पृथ्वी पर अक्षुण्ण जीवन की परिकल्पना कर सकते हैं।

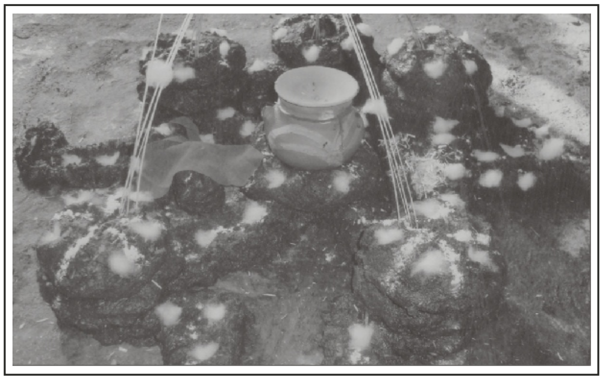

भारतीय विश्वविद्यालय संघ के अनुसार होने वाली प्रतियोगिताओं का प्रारूप

प्रविष्टियाँ भेजने हेतु प्रपत्र

कृपया एकल प्रतियोगिताओं हेतु एक ही छात्र–छात्रा का नाम भेजें, जिन प्रतियोगिताओं में विशेष प्रतिभा सम्पन्न छात्र–छात्राएं न हो, प्रविष्टि आवश्यक नहीं है, इससे विश्वविद्यालय में चयन में भी सुविधा होगी। इनमें छात्र–छात्रा का नाम, कक्षा के साथ–साथ गत वर्षो में प्राप्त उपलब्धि का उल्लेख करने का कष्ट करें।

प्रतियोगिताएं	प्रतिभागी	सहयोगी	कुल	समय सीमा
(क) संगीत – गायन				
1. शास्त्रीय एकल गायन (हिन्दुस्तानी अथवा कर्नाटक)	1	2	3	12 से 15 मिनट
2. उप शास्त्रीय एकल गायन	1	2	3	8 से 10 मिनट
3. सुगम गायन (भारतीय)	1	2	3	4 से 6 मिनट
4. पाश्चात्य एकल गायन	1	2	3	4 से 6 मिनट
5. समूह गान (भारतीय/पाश्चात्य)	6	3	9	8 से 10 मिनट
(ख) वादन –				
1. शास्त्रीय एकल वादन	1	2	3	12 से 15 मिनट
2. लोक वाद्य यन्त्र	9	3	12	8 से 10 मिनट
(ग) नृत्य –				
1. लोक/आदिवासी नृत्य	10	5	15	8 से 10 मिनट
2. शास्त्रीय नृत्य	1	3	4	12 से 15 मिनट
3. सृजनात्मक (क्रिएटिव) नृत्य	1	3	4	8 से 10 मिनट
(घ) साहित्यिक –				
1. क्विज़	3	–	3	–
2. आशुभाषण	1	–	1	4 से 5 मिनट
3. वाद–विवाद	2	–	2	4 से 5 मिनट
4. स्वरचित कविता पाठ	1	–	1	4 से 5 मिनट
(ड.) अभिनय –				
1. एकांकी नाटक	9	3	12	25 से 30 मिनट
2. लघुनाटिका	6	3	9	8 से 10 मिनट
3. मूक अभिनय	6	2	8	4 से 5 मिनट
4. मिमिक्री (एकल)	1	–	1	4 से 5 मिनट
(च) चित्रकला –				
1. आशु चित्रकला (एकल)	1	–	1	2 से $2\frac{1}{2}$ घन्टे
2. कोलाज निर्माण	1	–	1	2 से $2\frac{1}{2}$ घन्टे
3. पोस्टर	1	–	1	2 से $2\frac{1}{2}$ घन्टे
4. क्ले मॉडलिंग	1	–	1	2 से $2\frac{1}{2}$ घन्टे
5. कार्टून	1	–	1	2 से $2\frac{1}{2}$ घन्टे
6. रंगोली	1	–	1	2 से $2\frac{1}{2}$ घन्टे
7. इन्स्टालेशन	4	–	4	2 से $2\frac{1}{2}$ घन्टे

साहित्यिक सांस्कृतिक परिषद्

चौधरी चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ।

माननीय प्रो० एस.के. काक, कुलपति, चौ. चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ	संरक्षक
माननीय प्रो० एस.वी.एस. राणा, प्रति कुलपति चौ० चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ	सहसंरक्षक
डॉ० नंद कुमार, प्राचार्य, शालिगराम शर्मा स्मारक पी.जी. कॉलेज, रासना, मेरठ	अध्यक्ष
डॉ० रागिनी प्रताप, संगीत विभाग, कनोहर लाल पी.जी. कॉलेज, मेरठ	उपाध्यक्ष
प्रो० नवीन चन्द्र लोहनी, हिन्दी विभाग, चौ० चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ	संयोजक
प्रो० वाई विमला, वनस्पति विज्ञान, चौ. चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ	सदस्य
प्रो० प्रतिभा त्यागी, अंग्रेजी विभाग, चौ. चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ	सदस्य
डॉ० रेखा सेठ, अध्यक्ष संगीत विभाग, इस्माइल पी.जी. कॉलेज, मेरठ	सदस्य
डॉ० लाल रत्नाकर, कला विभाग, एम.एम.एच. कॉलेज, गाजियाबाद	सदस्य
डॉ० आर.एम. तिवारी, अंग्रेजी विभाग, डी.ए.वी. कॉलेज, मुजफ्फरनगर	सदस्य
डॉ० आर.के. सोनी, रसायन विज्ञान विभाग, चौ. चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ	सदस्य
डॉ० ए.के. चौबे, जन्तु विज्ञान विभाग, चौ. चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ	सदस्य
डॉ० अतवीर सिंह, अर्थशास्त्र विभाग, चौ. चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ	सदस्य
डॉ० संजय कुमार, मनोविज्ञान विभाग, चौ. चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ	सदस्य
डॉ० आलोक कुमार, समाजशस्त्र विभाग, चौ. चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ	सदस्य
डॉ० जे.पी. यादव, हिन्दी विभाग, एम.एम. कॉलेज, मोदीनगर गाजियाबाद	सदस्य
डॉ० जी.एस. रूहल, खेल अधिकारी, चौ. चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ	सदस्य
प्रो० एच.एस. बालियान, अधिष्ठाता छात्र कल्याण, चौ. चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ	पदेन सदस्य
प्रो० एम.के. गुप्ता, कुलानुशासक, चौ. चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ	पदेन सदस्य
श्री वी. के. सिन्हा, कुलसचिव, चौ. चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ	पदेन सदस्य
श्री एच. एन. शुक्ला, वित्त नियंत्रक, चौ. चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ	पदेन सदस्य

साल भर के प्रस्तावित कार्यक्रम

क्र० सं०	दिनांक		दिवस		कार्यक्रम
1.	26 जनवरी	–	गणतत्र दिवस	–	क्विज़ – गोष्ठी
2.	28 फरवरी	–	विज्ञान दिवस	–	प्रदर्शनी / साईस क्विज
3.	14 अप्रैल	–	अम्बेडकर जयंती	–	गोष्ठी
4.	10 मई	–	क्रान्ति दिवस	–	गोष्ठी – गीत/नाट्य
5.	5 जून	–	पर्यावरण दिवस	–	वृक्षारोपण / गोष्ठी
6.	1 जुलाई	–	विश्वविद्यालय स्थापना दिवस	–	गोष्ठी
7.	15 अगस्त	–	स्वतन्त्रता दिवस	–	कवि सम्मेलन, क्विज – गोष्ठी
8.	5 सितम्बर	–	शिक्षक दिवस	–	गोष्ठी
9.	14 सितम्बर	–	हिन्दी दिवस	–	क्विज – गोष्ठी
10.	2 अक्टूबर	–	महात्मा गाँधी जयंती	–	क्विज – गोष्ठी
11.	23 दिसम्बर	–	चौधरी चरण सिंह का जन्म दिवस	–	गोष्ठ / कवि सम्मेलन / रंगारंग कार्यक्रम

युवा महोत्सव – अक्टूबर अन्य पर्व

होली, दीपावली, ईद–उल–फितर, बैसाखी, नवसंवत्सर, रामनवमी, जन्माष्टमी।